4. (क)

प्राकृत साहित्य एवं गद्य संग्रह

(पाइय साहित्य व गज्ज–संगहो)

प्राकृत गद्य संग्रह

1. लोहस्स न अन्तो (उत्तराध्ययनटीका)

पाठ परिचय :

ऐसी मान्यता है कि श्रमणसम्राट् भगवान महावीर ने पावापुरी में निर्वाण प्राप्त करते समय अन्तिम प्रवचन के रूप में उत्तराध्ययन सूत्र का उपदेश किया था। इसके नाम से ही इसकी विशिष्टता ज्ञात होती है–उत्तराध्ययन अर्थात् अध्ययन करने योग्य उत्तमोत्तम प्रकरणों का संग्रह। भवसिद्धिक और परिमित संसारी जीव ही उत्तराध्ययन का भावपूर्वक स्वाध्याय करते हैं।

भाषाशास्त्रियों के मत में सर्वाधिक प्राचीन भाषा के तीन सूत्र हैं–1. आचारांग 2. सूत्रकृतांग और 3. उत्तराध्ययन। मूलसूत्रों के संबंध में अनेक मान्यताएँ होने पर भी 'उत्तराध्ययन' को सभी विद्वानों ने एक स्वर से मूलसूत्र माना है। स्थानकवासी सम्प्रदाय में 1. उत्तराध्ययन 2. दशवैकालिक 3. नन्दीसूत्र और 4. अनुयोगद्वार को मूल सूत्र में गिना जाता है। यहाँ उत्तराध्ययन सूत्र का क्रम पहले होते हुए भी साधकों द्वारा पहले दशवैकालिक और फिर उत्तराध्ययन सूत्र पढ़ा जाता है।

उत्तराध्ययन सूत्र में 36 अध्ययन हैं, जिन्हें निम्न चार भागों में विभक्त किया जा सकता है–

1. उपदेशात्मक– अध्ययन 1, 2, 3, 4, 5, 6 और 10

2. धर्मकथात्मक–अध्ययन 7, 8, 9, 12, 13, 14, 18, 19, 20, 21, 22, 23, 24 और 27

3. आचरणात्मक–अध्ययन 11, 15, 16, 17, 24, 26, 32 और 35

4. सैद्धान्तिक–अध्ययन 28, 29, 30, 31, 33, 34 और 36

डॉ. सुदर्शनलाल जैन के अनुसार उत्तराध्ययन सूत्र का विषय वर्गीकरण निम्नानुसार किया गया है–

1. शुद्ध दार्शनिक सिद्धान्तों के प्रतिपादक अध्ययन–24 (समितीय), 26 (समाचारी), 28 (मोक्षमार्ग गति), 29 (सम्यक्त्व पराक्रम), 30 (तपोमार्ग), 31 (चरणविधि), 33 (लेश्या), 36 (जीवाजीवविभक्ति) और दूसरे एवं 16वें अध्ययन का गद्य भाग।

2. नीति एवं उपदेश प्रधान अध्ययन–1 (विनय), 2 (परीषह), 3 (चतुरंगीय) 4 (असंस्कृत), 5 (अकाममरण), 6 (क्षुल्लक–निर्ग्रन्थीय), 7 (एलय), 8 (कापिलीय), 10 (द्रुम पत्रक), 11 (बहुश्रुत पूजा), 16 (ब्रह्मचर्य समाधिस्थान का पद्य भाग), 17 (पापश्रमणीय), 32 (प्रमादस्थानीय) और 35 (अनगार)

3. आख्या ।नात्मक अध्ययन– 9 (नमिप्रव्रज्या), 1 ।2 (हरिकेशीय), 13 (चित्तसंभूतीय), 14 (इषुकारीय), 18 (संजय–संयतीय), 19 (मृगापुत्रीय) 20 (महानिर्ग्रन्थीय), 21 (समुद्रपालीय), 22 (रथनेमीय), 23 (केशीगौतमीय) और 25 (यज्ञीय)

उत्तराध्ययन सूत्र पूर्ण रूप से अध्यात्म शास्त्र है। दार्शनिक सिद्धान्तों के साथ इसमें बहुत से आख्यानों का संकलन है। इसमें साध्वाचार, उपदेशनीति, सदाचार, उस समय की प्रचलित सामाजिक, राजनैतिक परम्पराओं का समावेश है। भारतवर्ष में प्रचलित दूसरी परम्पराएँ भी इससे प्रभावित हुई हैं। उदाहरणार्थ–वैदिक परम्परा, महाभारत, गीता, मनुस्मृति आदि और बौद्ध धर्म के धम्मपद, सुत्तनिपात आदि ग्रन्थों पर भी स्पष्ट प्रभाव पड़ा है। इसलिए उत्तराध्ययन सूत्र में वर्णित भाव अन्य परम्पराओं के ग्रन्थों से मिलते हैं। ध्यानपूर्वक पढ़ने से पता चलता है कि कहीं–कहीं तो शब्द भी एक से मिल जाते हैं। उनमें बहुत सी गाथा और पद भी ज्यों के त्यों मिल जाते हैं।

मूलपाठ :

1. तेणं कालेणं तेणं समएणं कोसंबी नाम नयरी। जियसत्तू राया। कासवो उवज्झाओ विज्जाठाणपारगो राइणो बहुमओ। वित्ती से उवकप्पिया। तस्स जसा नाम भारिया। तेसिं पुत्तो कविलो नाम।

2. कासवो तम्मि कविले खुड्डुलाए चेव कालगओ। ताहे तम्मि मए तं पयं राइणा अन्नस्स विप्पस्स दिन्नं। सो य आसेण छत्तेण य धरिज्जमाणेण वच्चइ। तं दट्ठूण जसा परुण्णा। कविलेण पुच्छिया। ताए सिट्ठं जहा–'पिया ते एवं विहाए इड्ढीए निग्गच्छियाइओ, जेण सो विज्जासंपन्नो।'

3. सो कविलो भणइ–'अहं पि अहिज्जामि।' सा भणइ–'इह तुमं मच्छरेण न कोई सिक्खावेइ, वच्च सावत्थीए नयरीए पिउमित्तो इंददत्तो नाम उवज्झाओ सो तुमं सिक्खावेही।' सो गओ सावत्थीं, पत्तो य तस्स समीवं, निवडिओ चलणेसु। पुच्छिओ–'कओ सि तुमं ?' तेण जहावत्तं कहिअं। विणयपुव्वयं च पंजलिउडेण भणियं–'भयवं! अहं विज्जत्थी तुम्हं तायनिव्विसेसाणं पायमूलमागओ। करेह मे विज्जाए अज्झावणेण पसायं।'

4. उवज्झाएण वि पुत्तयसिणेहमुव्वहंतेण भणियं–'वच्छ! जुत्तो ते विज्जागहणुज्जमो, विज्जाविहीणो पुरिसो पसुणो निव्विसेसो होइ। इहपरलोए य विज्जा कल्लाणहेऊ। ता अहिज्जसु विज्जं, साहीणाणि य तुह सव्वाणि विज्जासाहणाणि, परं भोयणं मम घरे निप्परिग्गहत्तणओ नत्थि। तमंतरेण न संपज्जए पढणं।'

5. तेण भणियं–'भिक्खावित्तेण वि संपज्जइ भोयणं।' उवज्झाएण भणियं– 'न भिक्खावित्तीहिं पढिउं सक्किज्जए, ता आगच्छ पत्थेमो किंचि इब्भं तुह भोयणनिमित्तं।' गया ते दो वि तन्निवासिणो सालिभद्दइब्भस्स सयासं। कया उवसत्थी। पुच्छिओ इब्भेण पओयणं। उवज्झाएण भणियं–'एस मे मित्तस्स पुत्तो कोसंबीओ विज्जत्थी आगओ। तुज्झ भोएण निस्साए अहिज्जइ विज्जं मम सयासे। तुज्झ महंतं पुण्णं विज्जोवग्गहकरणेण।' सहरिसं च पडिवन्न तेण। सो कविलो तत्थ जिमिउं जिमिउं अहिज्जइ। एगा दासी तस्स परिवेसइ।

6. अन्नया सा दासी उव्विग्गा दिट्ठा। तेण पुच्छिआ–'कओ ते अरई ?' तीए भणियं–'मम समीवे पत्त–फुल्लाणं वि मोल्लं नत्थि। सहीण मज्झे विगुप्पिस्सं। अओ तुमं मज्झ किंचि धणं आणेह। एत्थ धणो नाम सेट्ठी। अप्पहाए चेव जो णं पढमं वद्धावेइ सो तस्स दो सुवण्णमासए देइ। तत्थ तुमं गंतूण वद्धावेहि।'

7. 'आमं' ति तेण भणिए तीए सो अइपभाए तत्थ पेसिओ। वच्चंतो य आरक्खियपुरिसेहिं गहिओ बद्धो य। तओ पभाए पसेणइस्स सो उवणीओ। राइणा पुच्छिओ। तेण सब्भावो कहिओ। राइणा भणियं जं मग्गसि तं देमि।' सो भणइ–'चितिउं मग्गामि।' राइणा 'तह' त्ति भणिए असोगवणियाए चिंतेउमारद्धो–

8. 'दोहिं मासेहिं वत्थाभरणाणि न भविस्संति ता सुवण्णसयं मग्गामि। तेण वि भवण–जाणवाहणाइं न भविस्संति ता सुवण्णसयं मग्गामि। इमेण वि डिंभरूवाणं परिणयणाइवओ न पूरेइ ता लक्खं मग्गामि। एसो वि सुहिसयण–बन्धु–सम्माणदीणाणाहाइ दाण–विसिट्ठ–भोगोवभोगाण ण पज्जत्तो ता कोडिं कोडिसयं कोडिसहस्सं वा मग्गामि।'

एवमाइ चितंतो सुहकम्मोदएण तक्खणमेव सुहपरिणाममवगओ संवेगमावन्नो लग्गो परिभाविउं–'अहो! लोभस्स विलसियं, दोण्ह सुवण्णमासाण कज्जेणागओ लाभमुवट्ठियं दट्ठूण कोडीहिं पि न उवरमइ मणोरहो। अन्नं च विज्जापढणत्थं विदेसमागओ जाव ताव अवहीरिऊण जणणिं, अवगणिऊण उवज्झायहिय–उवएसं, अवमन्निऊण कुल एएण लोहेण जाणमाणो वि मोहिओ।'

इय चिंतिऊण सो कविलो आगओ राइसगासं। राइणा भणियं–'कि चितियं ?' तेण य निय–मणोरह–वित्थरो कहिओ।*

* उत्तराध्ययन सुखबोधाटीका (नेमिचन्द्रसूरि) निर्णयससागर प्रेस, 1937 पाना 124–125।

हिन्दी

उस युग और उस समय में कौशाम्बी नामक नगरी थी। राजा जितशत्रु था। वह विद्या का आधार–स्तम्भ काश्यप उपाध्याय राजा के द्वारा सम्मानित था। उसको नौकरी दे दी गयी। उस काश्यप के यशा नामक पत्नी थी। उनके कपिल नामक पुत्र था। उस कपिल के बचपन में ही काश्यप मृत्यु को प्राप्त हो गया। तब उसके मर जाने पर उसका पद राजा के द्वारा अन्य ब्राह्मण को दे दिया गया। वह घोड़े पर छत्र धारण किये हुए वहाँ से निकला। उसे देखकर यशा रोने लगी। कपिल ने (इसका कारण) पूछा। उसने कहा कि– तुम्हारा पिता भी ई प्रकार की समृद्धि के साथ निकलता था। क्योंकि वह विद्या–सम्पन्न था।

वह कपिल कहता है– 'मैं भी पढूँगा।' वह कहती है– 'यहाँ पर तुम्हें ईर्ष्या के कारण कोई नहीं पढ़ायेगा। तुम श्रावस्ती चले जाओ, वहाँ तुम्हारे पिता का मित्र इन्द्रदत्त नामक उपाध्याय है। वह तुम्हें सब सिखा देगा। कपिल श्रावस्ती चला गया और उस उपाध्याय के पास पहुँचा। उसके चरणों पर गिर पड़ा। उसने पूछा– 'तुम कहाँ से? कपिल ने सब कुछ कह दिया। हाथ जोड़कर विनयपूर्वक उसने कहा– 'हे भगवन्! पिता के निधन हो जाने से आपके चरणों में मैं विद्या के लिए आया हूँ। इसलिए विद्या पढ़ाकर मेरे ऊपर कृपा करिए।'

पुत्र की तरह स्नेह धारण करते हुए उपाध्याय ने कहा– पुत्र ! विद्या ग्रहण करने में तुम्हारा प्रयन्न उचित हैं। विद्या से रहित मनुष्य पशु के समान होता है। इस लोक और परलोक मं विद्या ही कल्याण करने में साधनरूप है। इसलिए विद्या पढ़ो। विद्या पढ़ने के सब साधन तुम्हें प्राप्त हैं, किन्तु परिग्रहरहित होने के कारण मेरे घर में भोजन नहीं है। उसके बिना पढ़ना नहीं हो सकेगा।

कपिल ने कहा– 'भिक्षावृति से भी भोजन मिल जायेगा। उपाध्याय ने कहा– 'भिक्षावृति से पढ़ना संभव नहीं है। इसलिए आओ, तुम्हारे भोजन की व्यवस्था के लिए किसी धनी के यहाँ चलते हैं। वे दोनों वहाँ के निवासी शालिभद्र धनी के यहाँ गये। उसे आशीर्वाद दिया। धनी ने (आने का) प्रयोजन पूछा। उपाध्याय ने कहा– 'यह मेरे मित्र का पुत्र कौशम्बी से विद्या पढ़ने के लिए आया है। तुम्हारी भोजन की व्यवस्था में मेरे पास यह विद्या पढ़ेगा। विद्या के साधन जुटाने से तुम्हें बड़ा पुण्य होगा। उस धनी ने सहर्ष इसे स्वीकार कर लिया। वह कपिल वहाँ भोजन करता हुआ पढ़ने लगा। एक नौकरानी उसे भोजन परोसती थी।

एक बार वह नौकरानी दुःखी दिखायी दी। कपिल ने पूछा– 'तुम किसी कारण दुःखी हो?' उसने कहा– 'मेरे पास पत्ते और फूल खरीदने के लिए भी उनकी कीमत नहीं है। सखियों के बीच में मुझे नीचा देखना पड़ता है। अतः तुम मेरे लिए कुछ धन लाओ। यहाँ धन नाम का सेठ है। प्रातःकाल के पहले ही जो उसे सबसे पहले बधाई देता है, वह उसके लिए दो माशा स्वर्ण देता है। वहाँ जाकर तुम बधाई दो।'

अभ्यास

शब्दार्थ :

खुड्डलअ–छोटा	सिट्ठं–कहा	अज्झावण–अध्यापन
साहीण–प्राप्त	इब्भं–धनी	निस्सा–आश्रय
अरई–दुःख	विगुप्प–लज्जित होना	सब्भाव–सरलता
डिंभरूव–सन्तान	पज्जत–पर्याप्त	बिलसियं–विस्तार

वस्तुनिष्ठ प्रश्न :

सही उत्तर का क्रमांक कोष्ठक में लिखिए :

1. कपिल के पिता को राज्य–सम्मान प्राप्त था–

(क) धनी होने के कारण (ख) ब्राह्मण होने के कारण

(ग) बलशाली होने के कारण (घ) विद्या–सम्पन्न होने के कारण ( )

लघुत्तरात्मक प्रश्न :

प्रश्न का उत्तर एक वाक्य में लिखिए :

1. कपिल को उसकी माता ने कहाँ भेजा था ?
2. कपिल के भोजन की व्यवस्था किसने की ?
3. कपिल में धन का लोभ किसने जागृत किया ?

निबन्धात्मक प्रश्न :

(क) कपिल विद्याध्ययन के लिए क्यों गया ?

(ख) लोभ में पड़ जाने पर कपिल ने क्या सोचा ?

(ग) इस पाठ की शिक्षा अपने शब्दों में लिखिए।

2. मेरुपभस्स हत्थिणो अणुकंपा (ज्ञाताधर्मकथा)

पाठ परिचय :

प्राकृत भाषा के प्राचीन ग्रन्थों में अर्धमागधी में लिखित अंगग्रन्थ प्राचीन भारतीय संस्कृति और चिंतन के क्रमिक विकास को जानने के लिए महत्त्वपूर्ण साधन हैं। अंग ग्रन्थों में ज्ञाताधर्मकथा का विशिष्ट महत्त्व है। कथा और दर्शन का यह संगम ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ के नाम में भी इसका विषय और महत्त्व छिपा हुआ है। उदाहरण प्रधान धर्मकथाओं का यह प्रतिनिधि ग्रन्थ है। ज्ञातपुत्र भगवान महावीर की धर्म कथाओं को प्रस्तुत करने वाले इस ग्रन्थ का नाम ज्ञाताधर्मकथा सार्थक है। विद्वानों ने अन्य दृष्टियों से भी इस ग्रन्थ के नामकरण की समीक्षा की है।

दृष्टान्त एवं धर्म कथाएँ

आगम ग्रन्थों में कथा–तत्त्व के अध्ययन की दृष्टि से ज्ञाताधर्मकथा में पर्याप्त सामग्री है। इसमें विभिन्न दृष्टान्त एवं ध र्म कथाएं हैं, जिनके माध्यम से जैन तत्त्व–दर्शन को सहज रूप में जनमानस तक पहुँचाया गया है। ज्ञाताधर्मकथा आगमिक कथाओं का प्रतिनिधि ग्रन्थ है। इसमें कथाओं की विविधता है और प्रौढ़ता भी। मेघकुमार, थावच्चापुत्र, मल्ली तथा द्रौपदी की कथाएँ ऐतिहासिक वातावरण प्रस्तुत करती हैं। प्रतिबुद्धराजा, अर्हन्नक व्यापारी, राजा रूक्मी, स्वर्णकार की कथा, चित्रकार कथा, चोखा परिव्राजिका आदि कथाएँ मल्ली की कथा की अवान्तर कथाएँ हैं। मूलकथा के साथ अवान्तर कथा की परम्परा की जानकारी के लिए ज्ञाताधर्मकथा आधारभूत स्रोत है। ये कथाएँ कल्पना–प्रधान एवं सोद्देश्य हैं। इसी तरह जिनपाल एवं जिनरक्षित की कथा, तेतलीपुत्र कथा, सुषमा की कथा एवं पुण्डरीक कथा कल्पना प्रधान कथाएँ हैं।

ज्ञाताधर्मकथा में दृष्टान्त और रूपक कथाएं भी हैं। मयूरों के अण्डों के दृष्टान्त से श्रद्धा और धैर्य के फल को प्रकट किया गया हैं। दो कछुओं के उदाहरण से संयमी और असयंमी साधक के परिणामों को उपस्थित किया गया है। तुम्बे के दृष्टान्त से कर्मवाद को स्पष्ट किया गया है। दावद्रव नामक वृक्ष के उदाहरण द्वारा आराधक और विराधक के स्वरूप को स्पष्ट किया गया है। ये दृष्टान्त कथाएँ परवर्ती साहित्य के लिए प्रेरणा प्रदान करती हैं।

इस ग्रन्थ में कुछ रूपक कथाएँ भी हैं। दूसरे अध्ययन की कथा धन्ना सार्थवाह एवं विजय चोर की कथा है। यह आत्मा और शरीर के संबंध का रूपक है। सातवें अध्ययन की रोहिणी कथा पांच व्रतों की रक्षा और वृद्धि को रूपक द्वारा प्रस्तुत करती है। उदकजात नामक कथा संक्षिप्त है। किन्तु इसमें जल–शुद्धि की प्रक्रिया द्वारा एक ही पदार्थ के शुभ एवं अशुभ दोनों रूपों को प्रकट किया गया है। अनेकान्त के सिद्धान्त को समझाने के लिए यह बहुत उपयोगी है। नन्दीफल की कथा यद्यपि अर्ध कथा है, किन्तु इसमें रूपक की प्रधानता है। समुद्री अश्वों के रूपक द्वारा लुभावने विषयों के स्वरूप को स्पष्ट किया गया है।

छठे अध्ययन में कर्मवाद जैसे गुरु गंभीर विषय को रूपक के द्वारा स्पष्ट किया गया है। गणधर गौतम की जिज्ञासा के समाधान में भगवान ने तूंबे के उदाहरण से इस बात पर प्रकाश डाला कि मिट्टी के लेप से भारी बना हुआ तूंबा जल में मग्न हो जाता है और लेप हटने से वह पुनः तैरने लगता है। वैसे ही कर्मों के लेप से आत्मा भारी बनकर संसार सागर में डूबता है और उस लेप से मुक्त होकर ऊर्ध्वगति करता है। दसवें अध्ययन में चन्द्र के उदाहरण से प्रतिपादित किया है कि जैसे कृष्णपक्ष में चन्द्र की चारू चन्द्रिका मंद से मंदतर होती जाती है और शुक्ल पक्ष में वही चन्द्रिका उत्तरोत्तर अभिवृद्धि को प्राप्त होती है वैसे ही चन्द्र के सदृश कर्मों की अधिकता से आत्मा की ज्योति मंद होती है और कर्म की ज्यों–ज्यों न्यूनता होती है त्यों–त्यों उसकी ज्योति अधिकाधिक जगमगाने लगती है।

ज्ञाताधर्मकथा पशुकथाओं के लिए भी उद्‌गम ग्रन्थ माना जा सकता है। इस एक ही ग्रन्थ में हाथी, अश्व, खरगोश, कछुए, मयूर, मेंढक, सियार आदि को कथाओं के पात्रों के रूप में चित्रित किया गया है। मेरुप्रभ हाथी ने अहिंसा का जो उदाहरण प्रस्तुत किया है, वह भारतीय कथा साहित्य में अन्यत्र दुर्लभ है। ज्ञाताधर्मकथा के द्वितीय श्रुतस्कंद में यद्यपि 206 साध्वियों की कथाए हैं, किन्तु उनके ढांचे, नाम, उपदेश आदि एक से हैं। केवल काली की कथा पूर्ण कथा है। नारी–कथा की दृष्टि से यह कथा महत्त्वपूर्ण है।

ज्ञाताधर्मकथा में भारतीय संस्कृति के विभिन्न पक्ष अंकित हुए है। प्राचीन भारतीय भाषाओं, काव्यात्मक प्रयोगों, विभिन्न कलाओं और विद्याओं, सामाजिक जीवन और वाणिज्य व्यापार आदि के संबंध में इस ग्रन्थ में ऐसे विवरण उपलब्ध हैं जो प्राचीन भारतीय संस्कृति के इतिहास में अभिनव प्रकाश डालते हैं। इस ग्रन्थ के सूक्ष्म सांस्कृतिक अध्ययन की नितान्त आवश्यकता है।

1. तए णं तुमं मेहा! अण्णया कयाइ मज्झिमए वरिसा–रत्तंसि महावुट्ठिकायंसि सण्णिवइयंसि जेणेव से मंडले तेणेव उवागच्छसि उवागच्छित्ता दोच्चंपि मंडलं घाएसि, एवं चरिमे–वासा–रत्तंसि महा–वुट्ठिकायंसि सण्णिवइय–माणंसि जेणेव से मंडले तेणेव उवागच्छसि उवागछित्ता तच्चंपि मंडलघायं करेसि जं तत्थ तणं वा जाव सुहंसुहेणं विहरसि।

2. अह मेहा! तुमं गइंदभावम्मि वट्टमाणो कमेणं णलिणि–वण–विवह–णगरे हेमंते कुंद–लोद्ध–उद्धुत–तुसार–पउरम्मि अइक्कंते अहिणवे गिम्ह समयंसि पत्ते वियट्टमाणे वणेसु वणकरेणु–विविह–दिण्णकय पंसुवघाओ तुमं उउय–कुसुमकय चामर–कण्णपूर परिमंडियाभिरामो मयवस–विगसंत कड–तडकिलिण्ण–गंधमदवारिणा सुरभि–जणियगंधो करेणु परिवारिओ उउ–समत्त–जणियसोहो काले दिणयर–करपयंडे परिसोयि–तरुवर–सिहर–भीमतर–दंसणिज्जे भिंगाररवंत–भेरवरवे–णाणाविह पत्तकट्ठ तण–कय वरुद्धुत पइमारुयाइद्ध–णहयल–दुमगणे वाउलिया–दारुणतरे तण्हावस–दोस दूसिय–भमंत विविह–सावय–समाउले भीम दरिसणिज्जे वट्टंते दारुणम्मि गिम्हे मारुयवस–पसर–पसरिय–वियंभिएणं, अब्भहिय–भीम भेरव–रवप्पगारेणं महुधारा–पडिय–सित्त–उद्धायमाण धगधगंत–सद्‌दुद्धएणं दित्ततर–सफुलिंगेणं धूममालाउलेणं सावय–सयंत करणेणं अब्भहियवण दवेणं जालालोविय–णिरुद्ध–धूमंध ाकारभीओ आयवालोय महेत–तुंबइयपुण्णकण्णो आकुंचिय थोर पीवरकरो भयवस भयंत दित्त णयणो वेगेण महामेहोव्व पवणोल्लियमहल्लरूवो जेणेव कओ ते पुरा दवग्गिभय–भीयहियएणं अवगय–तण–प्पएसरुक्खो रुक्खोद्देसो दवग्गि–संताण–कारणट्ठाए जेणेव मंडले तेणेव पहारेत्थ गमणाए। एक्को ताव एस गमो।

3. तए णं तुमं मेहा! अण्णया कयाइं कमेणं पंचसु उऊसु समइक्कंतेसु गिम्हकाल समयंसि जेट्ठामूले मासे पायवसंघं ससमुट्ठिएणं जाव संवट्टिएसु मिय–पसु–पक्खिसरीसिवेसु दिसोदिसिं विप्पलायमाणेसु तेहिं बहूहिं हत्थीहि य सद्धिं जेणेव मंडले तेणेव पहारेत्थ गमणाए।

4. तत्थ णं अण्णे बहवे सीहा य वग्घा य विगा य दीविया य अच्छा य तरच्छा य पारासरा य सरभा य सियाला सुणहा कोला ससा कोकंतिया चित्ता चिल्लला पुव्व पविट्ठ अग्गिभय विद्‌दुया एगयओ बिलधम्मेणं चिट्ठंति। तए णं तुमं मेहा! जेणेव से मंडले तेणेव उवागच्छसि 2 त्ता तेहिं बहूहिं सीहेहिं जाव चिल्ललेहि य एगयओ बिलधम्मेणं चिट्ठसि।

5. तएणं तुमं मेहा! पाएणं गत्तं कंडुइस्सामी त्तिकट्टु पाए उक्खित्ते, तंसि च णं अंतरंसि अण्णेहिं बलवंतेहिं सत्तेहिं पणोलिज्जामाणे 2 ससए अणुप्पविट्ठे। तए णं तुमं मेहा! गायं कंडुइत्ता पुणरवि पायं पडिणिक्खमिस्सामि त्तिकट्टु त ंससयं अणुपविट्ठं पाससि 2 त्ता पाणाणुकंपयाए भूयाणुकंपयाए जीवाणुकंपयाए सत्ताणकंपयाए से पाए अंतरा चेव संधारिए णो चेव णं णिक्खित्ते। तए णं तुमं मेहा! ताए पाणाणुकंपयाए जाव सत्ताणुकंपयाए संसारे परित्तीकए माणुस्साउए णिबद्धे।

6. तए णं से वणदवे अड्‌ढाइज्जाइं राइंदियाइं तं वणं झामेइ 2 त्ता णिट्ठिए उवरए उवसंते विज्झाए यावि होत्था।

7. तए णं ते बहवे सीहा य जाव चिल्ललायंत वणदवं णिट्ठियं जाव विज्झायं पासंति 2 त्ता अग्गिभय विप्पमुक्का तण्हाए य छुहाए य परब्भाहया समाणा तओ मंडलाओ पडिणिक्खमंति 2 त्ता सव्वओ समंता विप्पसरित्था।

8. तएणं ते बहवे हत्थी जाव छुआएय परब्भाहया समाणा तओ मंडलाओ पडिणिक्खमंति 2 त्ता दिसोदिसिं विप्पसरित्था। तए णं तुमं मेहा! जुण्णे जराज्जरियदेहे सिढिल–वलितया–पिणिद्धगत्ते दुब्बले किलंते जुंजिए पिवासिए अत्थामे जबले अपरक्कमे अचंकमणो वा ठाणुखंडे वेगेण विप्पसरिस्सामि त्तिकट्टु पाए पसारेमाणे विज्जुहए विव रययगिरिपब्भारे धरणि तलंसि सव्वंगेहिं सण्णिवइए।

9. तए णं तव मेहा! सरीरगंसि वेयणा पाउब्भूया उज्जला जाव दाहवक्कंतीए यावि विहरसि। तए णं तुमं मेहा! तं उज्जलं जाव दुरहियासं तिण्णि राइंदियाइं वेयणं वेयमाणे विहरित्ता एगं वाससयं परमाउं पाइलत्ता इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे रायगिहे णयरे सेणियस्स रण्णो धारिणीए देवीए कुच्छिंसि कुमारत्ताए पच्चायाए।

हिन्दी

तुम हे मेघ! पूर्ण जम्म में चार दांतों वाले मेरूप्रभ नाम के हाथी हुए। एक बार उस जंगल की आग को देखकर तुम्हें यह इस प्रकार का संकल्प उत्पन्न हुआ – 'मेरे लिये यह श्रेय कर है कि इस समय गंगा महानदी के दक्षिणी तट पर विन्ध्याचल की तलहटी में जंगल की अग्नि से रक्षा करने के लिए अपने झुंड के साथ एक बड़ा मंडल (रक्षा का बड़ा मैदान) बनाऊँ।' ऐसा (विचार) करके इस प्रकार निरीक्षण करते हो। निरीक्षण करके सुखपूर्वक विचरण करते हो।

किसी अन्य समय क्रमशः पाँच ऋतुएं व्यतीत हो जाने पर ग्री मकारल के अवसर पर जेठ के महिने में पेड़ों की रगड़ से उत्पन्न अग्नि के फैल जाने पर मृग, पशु, पक्षी तथा सरकने वाले प्राणियों के विभिन्न दिशाओं में दौड़ने पर उन बहुत से हाथियों के साथ (तुम भी) जिस और वह मंडल था उसी ओर जाने के लिए दौड़े।

उस मण्डल में अन्य बहुत से सिंह, बाध, भेड़िया, चीते, रीछ, तरच्छ (?) पाराशर, शरभ, श्रृगाल, विडाल, कुत्ते, कोल (सुअर), खरगोश, लोमड़ी, चित्र और चिल्लल आदि अग्नि के भय से घबराकर पहले ही आ धुसे थे और एक साथ बिलधर्म के अनुसार (कम स्थान पर अधिक प्राणी ठहराने की तरह) ठहरे थे।

तब हे मेघ ! तुम भी जहाँ वह मंडल था, वहाँ आये और आकर उन बहुत से सिंहों से लेकर चिल्ललों आदि के साथ एक जगह बिलधर्म से ठहर गये।

तब तुमने – 'पैर से शरीर खुजाऊँगा' ऐसा सोचकर एक पैर ऊपर उठाया, इसी समय उस खाली हुई जगह में अन्य बलवान प्राणियों द्वारा धकियाया हुआ एक खरखोश प्रविष्ट हो गया। तुमने शरीर खुजाकर फिर से पैर को नीचे रखूँगा' ऐसा सोचकर नीचे घुसे हुए उस खरखोश को देखा। यह देखकर (दो इन्द्रिय आदि वाले) प्राणियों की अनुकंपा से, (वनस्पति आदि) भूतों की अनुकंपा से, (स्थावर) सत्त्वों की अनुकंपा से तुमने वह पैर अधर में ही उठाये रखा, उसे नीचा नहीं रखा। (अन्यथा वह खरखोश मर जाता)।

तब तुमने उस प्राणियों की अनुकंपा और सत्त्वों आदि की अनुकंपा से संसार बन्धन को कम किया और मनुष्य –आयु का बन्ध किया। तब वह जंगल की अग्नि अढ़ाई दिन–रात तक उस वन को जलाती रही। जलाकर (वह दावानल) पूरी हो गयी, उपरान्त उपशान्त हो गयी और बुझ गयी।

तब वे बहुत से सिंह, चिल्लात आदि उस वन की अग्नि को पूरा हुआ, बुझा हुआ देखते हैं। देखकर अग्नि के भय से मुक्त हुए। भूख और प्यास से पीड़ित, दुःखी वे पशु उस मण्डल से निकल आते हैं। निकलकर सब ओर जाकर फैल गये।

तब तुम हे मेघ! जीर्ण, जरा से जर्जरित शरीर वाले, शिथिल एवं सिकुडने वाली चमड़ी से व्यास शरीर वाले, दुर्बल, थके हुए, भूखे–प्यासे, आधार रहित, निर्बल, सामर्थ्यरहित, चलने–फिरने में असमर्थ ठूँठ की भाँति हो गये। ''मैं वेग से चलूँगा' ऐसा सोचकर ज्योंहि तुमने पैर पसारा कि बिजली से आघात पाये हुए रजतगिरि के शिखर के समान सभी अंगों से तुम धरती पर धड़ाम से गिर पड़े।

तब तुम्हारे शरीर में वेदना उत्पन्न हुई। तीन दिन–रात तक उस वेदना को भोगते हुए रहे। तब एक सौ वर्ष की पूर्ण आयु भोगकर इसी जम्बूद्वीप नामक द्वीप में भारतवर्ष के राजगृह नगर में श्रेणिक राजा की धारिणी नामक रानी की कूँख में कुमार के रूप में प्रविष्ट हुए।

अभ्यास

1. शब्दार्थ :

वरिसा–रत्तंसि – बरसाती रात में, **महावुट्ठिकायंसि** – घनघोर वर्षा, **सण्णिवइयंसि** – होने पर, **चरिम वासा–रत्तंसि** – अंतिम बरसाती रात में। **गइंदभावम्मि** – गजेन्द्र भाव में, **वट्टमाणो** – वर्तमान, **णलिणि** – कमलिनि, **विवहणगरे** – विनाश करने वाले, **हेमंत** – हेमंत ऋतु आने पर, **लोद्ध** – हेमंत में विकसित होने वाला–लोध्र नामक वृक्ष विशेष, **तुसार** – बर्फ, **पउरम्मि** – प्रचुरता युक्त, **अहिणवे** – नूतन, **वियट्टमाणे** – इधर–उधर घूमते हुए, **पंसुवघाओ** – क्रीडावश धूली प्रहार, **उउयकुसुम** – ऋतुज पुष्प–ग्रीष्म ऋतु में होने वाले फूल, **मयवस** – मद के कारण, **विगसंत** – प्रफुल्लित होते हुए, **कडतड** – कपोल–स्थल, **किलिण्ण** – आर्द्र–गीले, **उउसमत्त** – ऋतु के अनुकूल, **पयंडे** – प्रचण्ड, **परिसोसिय** – परिशोषित –शुष्क बने हुए, **सिहर** – शिखर, **भेरव रवे** – भयंकर शब्द, **उद्धुत** – ऊपर उड़ान गए, **पउमारुय** – प्रतिकूल वायु, **आइद्ध** – व्याप्त, **णहयल** – नम तल, **वाउलिया** – वातुलिका–चक्रवात, **दारुणतरे** – अति भयंकर, **दोस दूसिय** – वेदना पीड़ित, **वट्टंते** – वर्तमान, **वियंभिएण** – प्रबल बने हुए, **अब्भहिय** – अत्यधिक, **महुधारा** – मधुधारा, **उद्धायमाण** – बढ़ते हुए, **सद्दुद्धुएणं** – शब्दायमान, **दित्ततर सफुलिंगेणं** – अत्यंत दीप्त–चिनगारियों से युक्त, **सावयसयंत करणेणं** – सैकड़ों जंगली प्राणियों का अंत करने वाले, **जालालोविय** – अग्नि की ज्वालाओं से आच्छादित, **आयवालोय** – अग्नि जनित ताप का अवलोकन, **पवणोल्लिय** – प्रचण्ड वायु द्वारा प्रेरित, **अवगय** – अपगत–दूर किए गए, **संताणकारणट्ठए** – त्राण पाने के लिए, **पहारेत्थ** – निश्चय किया, **गम** – आलापक–पाठ। **वग्घा** – व्याघ्र, **विगा** – वष्क–भेड़िया, **दीविया** – द्वीपी–चीते, **अच्छा** – रींछ–भालू, **तरच्छा** – व्याघ्र विशे ा, **पारासरा** – वन्य जन्तु विशेष, **सियाला** – श्रृंगाल–गीदड़, **विराल** – जंगली बिलाव, **सुणहा** – जंगली कुत्ते, **कोला** – सूअर, **ससा** – खरगोश, **कोकंतिया** – लोमड़ियाँ, **चित्ता** – चीतल, **चिल्लाला** – जंगली गधे, **पुव्वपविट्ठ** – पूर्व प्रविष्ट, **अग्गिभयविद्दुया** – अग्नि के भय से दौड़कर आए हुए, **बिलधम्मेणं चिट्ठंति** – बिल धर्म से स्थित हुए। **गत्तं** – गात्र–शरीर, **कुंडुइस्सामी** – खुजलाऊँ, **उक्खित्ते** – ऊंचा किया, **तंसि अंतरंसि** – उस अंतराल में, उस समय में, **पणोलिज्जमाणे** – धकेला गया, **अणुपविट्ठे** – अनुप्रविष्ट हुआ, **पडिणिक्खमिस्सामि** – वापस वहीं टिकाऊँ, **अंतरा चेव** – बीच में ही, **संधारिए** – रोक लिया, **परित्तीकए** – परिमित, स्वल्प किया, **माणुस्साउए** – मनुष्य का आयुष्य। **उड्ढइज्जाइं** – अढ़ाई, **राइंदियाइं** – रात–दिन, **झामेइ** – जलाता है, **णिट्ठिए** – क्षीण हुआ, **उवरए** – उपरत हुआ–समाप्त हुआ, **उवसंते** – उपशांत, **विज्झाए** – बुझा हुआ। **सिढिल** – शिथिल, **वलितया** – वलित्वचा–झुर्रियों से युक्त चमड़ी, **पिणिद्ध**

– आच्छादित, **जुंजिए** – क्षुधा युक्त, **अत्थाने** – स्थिरता रहित, **अचंकमणो** – चलने में असमर्थ, **ठाणुखंडे** – ठूंठ के टुकड़े के सदृश, **विप्परिस्सामि** – आगे चलूँ, **विज्जुहए विव** – बिजली द्वारा आहत, **रययगिरिपब्भारे** – रजतगिरी के खंड की तरह, **धरणितलंसि** – भूतल पर, **सव्वंगेहिं** – सभी अंगों से, **सण्णिवइए** – गिर पड़ा। **कुमारत्ताए** – राजकुमार के रूप में, **पच्चायाए** – प्रत्यागत–उत्पन्न हुए।

2. वस्तुनिष्ठ प्रश्न :

सही उत्तर का क्रमांक कोष्ठक में लिखिए :

1. जंगल में आग लगने पर खरगोश ने शरण ली–

(क) शेर की गुफा में (ख) जमीन के नीचे

(ग) हाथी के पैर के नीचे (घ) घास की झोपड़ी के नीचे ( )

3. लघुत्तरात्मक प्रश्न :

प्रश्न का उत्तर एक वाक्य में लिखिए :

1. मेरुप्रभ हाथी ने जंगल में मैदान क्यों बनाया ?

2. उस मैदान में मेरुप्रभ हाथी ने अपना पैर क्यों उठाया ?

3. मेरुप्रभ को अनुकम्पा करने पर क्या फल मिला ?

4. निबन्धात्मक प्रश्न :

(क) मेरुप्रभ हाथी ने जंगल की अग्नि को देखकर क्या किया ?

(ख) मेरुप्रभ ने खरगोश के जीवन की रक्षा के लिए क्या कष्ट सहे ?

(ग) 'प्राणी–रक्षा' पर 10–15 पंक्तियाँ लिखिए।

3. अगिसम्मस्स पराहवो (समराइच्चकहा)

पाठ परिचय :

हर व्यक्ति में महत्त्वाकांक्षा होती है। महत्त्वाकांक्षा की पूर्ति के लिए महान् काम करने की इच्छा भी रहती है, पर महान् काम वही व्यक्ति कर सकता है जो उदार, अनाग्रही और आत्मरत होता है।

आचार्य हदिभद्र सूरि जितने स्वाभिमानी थे उतने ही अनाग्रही भी थे। वे एक विशिष्ट ब्राह्मण कुल में पैदा हुए थे। उन्हें अपने ज्ञान पर बहुत बड़ा गर्व था। उनका यह संकल्प था कि जो मुझे अपने ज्ञान से हरा देगा, उसी को मैं अपना गुरु बनाऊंगा।

एक दिन रात्रि के समय वे कहीं जा रहे थे। रास्ते में एक मकान में बैठी जैन साध्वी याकिनी–महत्तरा 'संग्रहणी' ग्रन्थ का स्वाध्याय कर रही थी। उसमें एक श्लोक आया–

चक्कि दुगं हरिपणगं चक्कीण केसवो चक्की।

केसव चक्की केसव दुचक्की केसव चक्कीय।।

हरिभद्र ने यह पद्य सुना पर समझ में नहीं आया। वे तत्काल अभिमान छोड़कर ऊपर गए और विनम्र भाव से इस श्लोक का अर्थ पूछने लगे। अर्थ–बोध होते ही उन्होंने आर्या याकिनी महत्तरा को अपना बोधिगुरु स्वीकार कर लिया तथा जैन दर्शन के सिद्धांतों में आस्थावान हो गए। इसके बाद वे श्वेताम्बर परम्परा के आचार्य जिनभट्ट के विद्याधार गच्छ में आचार्य जिनदत्त के पास दीक्षित हो गए। श्रुत परम्परा के अनुसार इनका समय विक्रम की आठवीं–नौवीं शताब्दी माना जाता है।

आचार्य हरिभद्र सूरि का जैन परम्परा में अपना एक विशिष्ट स्थान है, क्योंकि उन्होंने जो श्रुत आराधना और जैन धर्म की प्रभावना की है वह बेजोड़ है। उनका दृष्टिकोण बहुत ही व्यापक और ग्राहक था। वे अपने संघ को बौद्ध और वैदिक दर्शन से भी लाभान्वित करना चाहते थे। वैदिक तो पहले वे खुद थे ही इसलिए उस दर्शन को समझने के लिए उन्हें अतिरिक्त प्रयास नहीं करना पड़ा। बौद्ध दर्शन की जानकारी के लिए उन्होंने अपने दो भानेज शिष्य हंस और परमहंस को नालंदा विश्वविद्यालय में गुप्त रूप से शिक्षा लेने के लिए भेजा, क्योंकि उस समय साम्प्रदायिक कट्टरता के कारण एक–दूसरे को ज्ञान नहीं दिया जाता था। हंस और परमहंस प्रच्छन्न रूप से बौद्ध छात्रों के साथ पढ़कर वापस आने वाले थे, तब अचानक किसी कारणवश उनका भेद खुल गया।

वे वहां से बचकर निकल जाना चाहते थे पर वहां के लोगों ने उनका पीछा किया। एक भाई को उन्होंने मार डाला और दूसरा हांफता–हांफता हरिभद्र के पास पहुंच गया। हरिभद्र को जब इस बात का पता चला तो वे आपे से बाहर हो गए। उन्हें यह ध्यान ही न रहा कि वे साधु हैं और बहुत बड़े धर्म–संघ के आचार्य हैं।

हरिभद्र सूरि विद्वान् थे, उसके साथ वे तांत्रिक भी थे। प्रतिशोध की भावना से प्रेरित होकर उन्होंने अपने तंत्र–बल से 1444 बौद्ध शिष्यों को तत्काल अपने उपाश्रय में बुलाया और निराधार आकाश में लटका दिया। नीचे अग्नि की बड़ी–बड़ी भट्टियां जलाकार तैल के कड़ाहे रख दिए गए क्योंकि आचार्य हरिभद्र के मन में उबलते तैल में बौद्ध छात्रों को तलने का अध्यवसाय बन गया था।

निम्न गद्यांश में अग्निशर्मा और गुणसेन (समरादित्य) के बचपन की घटनाएं वर्णित हैं। अग्निशर्मा अपनी कुरूपता और निर्धनता के कारण राजकुमार गुणसेन से बहुत अपमान प्राप्त करता है। उससे दुखी होकर वह साधु बन जाने का निश्चय कर लेता है। एक आश्रम में जाकर वह साधु–जीवन व्यतीत करने लगता है। अग्निशर्मा एक माह में एक बार भोजन करने का प्रण करता है। इस प्रकार वह कठोर जीवन व्यतीत करता है।

पाठ :

1. अत्थि इहेव जम्बूद्दीवे दीवे, अवरविदेहे वासे, उतुंगधवलवागार–मंडियं, नलिणिवणसंछन्नपरिहासणाहं, सुविभत्ततिय–उचक्क–चच्चरं, भवणेहिं जियसुरिन्दभवणसोहं खिइपइट्ठियं नाम नयरं।

जत्थ विलयाउ कमलाइं कोइलं कुवलयाइं कलहंसे।

वयणेहि जंपिएण य नयणेहि गईहि य जिणन्ति।।1।।

जत्थ य नराण वसणं विज्जासु, जसम्मि निम्मले लोहो।

पावेसु सया भीरुत्तणं च धम्ममि धणबुद्धी।।2।।

तत्थ य राया संपुण्णमण्डलो मयकलंकपरिहीणो।

जण–मण–नयणाणन्दो नामेणं पुण्णचन्दो त्ति।।3।।

अन्तेउरप्पहाणा देवी नामेण कुमुइणी तस्स।

सइ वड्ढियविसयसुहा इट्ठा य रइ व्व मयणस्स।।4।।

ताण य सुओ कुमारो गुणसेणो नाम गुणगणाइण्णो।

बालत्तणओ वंतरसुरो व्व केलिप्पिओ णवरं।।5।।

2. तम्मि य नयरे अतीव सयलजणबहुमओ, धम्मसत्थ–संघायपाढओ, लोग–ववहारनीइकुसलो, अप्पारम्भपरिग्गहो जन्नदत्तो नाम उवज्झाओ त्ति। तस्स य सोमदेवागब्भसंभओ, महल्लतिकोणुत्तिमंगो, आपिंगलवट्टलोयणो, ठाणमेत्तोवलक्खिय–चिविडनासो, बिलमेतकण्णासन्नो, विजियदन्तच्छयमहल्लदसणो, वंकसुदीहरसिरोहरो, विसमपरिहस्सबाहुजुयलो, अइमडहवच्छत्थलो, वंकविसमलम्बोयरो, एक्कपासुन्नयमहल्लवियडकडियडो, विसमपइट्ठिऊरुजुयलो, परिथूलकढिणहस्सजंघो, विसमवित्थिण्णचलणो, हुतहुयवह–सिहाजालपिंगकेसो, अग्गिसम्मो नाम पुत्तो त्ति।

3. तं पुत्तं च कोउहल्लेण कुमार गुणसेणो पहय–पडुपडहमुइंगवंसकंसालयप्पहाणेण महया तूरेण नयरजणामज्झ सहत्थतालं हसन्तो नच्चावेइ, रासहम्मि आरोवियं, पहट्ठबहुडिम्भबिन्दपरिवारियं, छित्तरमयधरियपोण्डरीयं, मणहरुत्तालावज्जन्तडिन्डिमं, आरोवियमहारायसद्दं, बहुसो रायमग्गे सुतुरियतुरियं हिण्डावेइ।

4. एवं च पइदिणं कयन्तेणेव तेण कयत्थिज्जन्तस्स तस्स वेरग्गभावणा जाया। चिन्तियं च णेण–

बहुजणधिक्कारहया ओहसणिज्जा य सव्वलोयस्स।

पुव्वि अकयसुपुण्णा सहन्ति परपरिभवं पुरिसा।।6।।
जइ ता न कओ धम्मो सप्पुरिसनिसेविओ अहन्नोणं।
जम्मन्तरम्मि घणियं सुहावहो मूढहियएणं।।7।।
एणिहं पि फलविवागं उग्गं दटठूणमकयपुण्णाणं।
परलोयबन्धुभूयं करेमि मुणिसेवियं धम्मं।।8।।
जम्मन्तरे विजेणं पावेमि न एरिसं महाभीमं।
सयलजणोहसणिज्जं विडम्बणं दुज्जणजणाओ।।9।

5. एवं च चिन्तिय पवन्नवेरग्गमग्गो निग्गओ नयराओ, पत्तो य मासमेत्तेण कालेण तव्विसयसन्धिसंठियंकृकृकृकृसुपरिओसं नाम तवोवणं त्ति। अह पविट्ठो सो तवोवणं। दिट्ठो य तेण तावसकुलप्पहाणो अज्जवकोडिण्ण नामो त्ति। पेच्छिऊण य पणामिओ तेणं। पुच्छिओ इसिणा–'कुओ भवं आगओ ?' त्ति। तओ तेण सवित्थरो निवेइओ से अत्तणो वुत्तन्तो। भणिओ य इसिणा–'वच्छ! पुव्वकयकम्मपरिणइवसेणं एवं परिकिलेसभाइणो जीवा हवन्ति। ता नरिन्दावमाणपीडियाणं, दारिद्दुक्खपरिभूयाणं, दोहग्गकलंकदूमियाणं, इट्ठजणविओगदहणतत्ताणं य एयं परं इह–परलोयसुहावहं परमनिव्वुइट्ठाणं त्ति। एत्थ–

पेच्छन्ति न संगकयं दुक्खं अवमाणणं च लोगाओ।

दोग्गइपडणं च तहा वणवासी सव्वहा धन्ना।।10।।

6. एवमणुसासिएण भणियं अग्गिसम्मेणं–'भगवं! एवमेयं, न संदेहो त्ति। ता जइ भयवओ ममोवरि अणुकम्पा, उचिओ वा अहं एयस्स वयविसेसस्स, ता करेहि मे एयवयप्पयाणेणाणुग्गहं' त्ति। इसिणा भणियं– 'वच्छ! वेरग्गमग्गाणुगओ तुमं ति करेमि अणुग्गहं, को अन्नो एयस्स उचिओ' त्ति। तओ अइकन्तेसु कइवयदिणेसु संमिऊण य सवित्थरं नियममायारं, पसत्थे तिहिकरणमुहुत्त–जोग–लग्गे दिन्ना से तावसदिक्खा।

7. महापरिभवजणियवेरग्गाइसयभाविएण याणेण तम्मि चेव दिक्खादिवसे सयलतावसलोयपरियरियगुरुसमक्खं कया महापइन्ना। जहा–'जावज्जीवं मए मासाओ मासाओ चेव भोत्तव्वं, पारणगदिवसे य पढमपविट्ठेणं पढमगेहाओ चेव लाभे वा अलाभे वा नियत्तियव्वं, न गेहन्तरमभिगन्तव्वं ति।' एवं च कयपइन्नस्स तस्स जहाकयं पइन्नमणुपालिन्तस्स अइक्कन्ता बहवे दियहा।*

* समराइच्चकहा–प्रथमखण्ड (सं.–डॉ. छगनलाल शास्त्री), बीकानेर, 1966 पृ. 12–18 से उद्धृत।

हिन्दी

यहाँ पर ही जम्बूद्वीप द्वीप में, अपरविदेह देश में ऊँचे, सफेद परकोटे से सुशोभित, कमलिनियों के वन से ढकी हुई खाई से युक्त, तिराहे एवं चौकों से अच्छी तरह विभक्त, भवनों से इन्द्र के भवन की शोभा को जीतने वाला क्षितिप्रतिष्ठित नामक नगर था।

गाथा – 1. जिस देश की कामिनियाँ अपने मुखों से कमलों को, वाणी से कोयल को, नेत्रों से नीलकमलों को और अपनी गति से राजहँसों को जीतती हैं।

2. जहाँ पर पुरुषों को विद्याओं में व्यसन था, निर्मल यश में लोभ था, सदा पापों में भीरूता थी तथा धर्म के कार्यों में संग्रह–बुद्धि थी।

3. वहाँ पर अधीनस्थ राजमंडलों से परिपूर्ण, मदरूपी कलंक से रहित, जनता के मन और नयनों को आनन्द देने वाला पूर्णचन्द्र नाम का राजा था, (जो वास्तव में पूर्णिमा के चन्द्र की तरह था)।

4. उस राजा के अन्तःपुर में प्रधान कुमुदिनी नामक रानी थी। उसके साथ विषय सुखों की वृद्धि होती रहती थी। वह कामदेव के लिए रति की तरह राजा को प्रिय थी।

5. उनके गूण–समूहों से युक्त गुणसेन नामक पुत्र था, जो बालकपन में ही व्यंतर देव की तरह मात्र क्रीड़ाप्रिय था।

और उसी नगर में सब लोगों के द्वारा अत्यन्त सम्मानित, धर्मशास्त्र के समूह का पाठक, लोक–व्यवहार में नीतिकुशल, अल्प हिंसा और अल्प परिग्रह वाला, यज्ञदत्त नामक उपाध्याय था। उसकी पत्नी सोमदेवा के गर्भ से उत्पन्न, बड़ा और तिकौने सिर वाला, पीली और गोल आँखों वाला, स्थान मात्र से मालूम पडने वाली चपटी नाक वाला, छेद मात्र से युक्त कानों वाला, ओठों से बाहर निकले हुए बड़े दांतों वाला, टेढ़ी और मोटी गर्दन वाला, असमान और छोटी–छोटी बाँहों वाला, अत्यन्त छोटे वक्षस्थल वाला, ऊँचा–नीचा और लम्बे पेट वाला, एक ओर उठी हुई बेडौल कमर वाला, असमान रूप से स्थित जंघाओं वाला, मोटी, कड़ी और छोटी पिंडलियों वाला, असमान और चौड़े पैरों वाला आग की लपटों की तरह पीले बालों वाला अग्निशर्मा नाम का पुत्र था।

उस (अग्निशर्मा नामक) पुत्र को कौतूहलवश कुमार गुणसेन नगाडे, पटह, मृदंग, बांसुरी, मंजीरों आदि एवं बडे तूर की आवाज से, नगर के बीच में, हाथों से तालियाँ बजाता हुआ, हँसता हुआ नचाता था। गधे पर चढ़ाकर, हँसते हुए बहुत से बालकों से घिरे हुए छत्र के रूप में फटे सूप को धारण कराये हुए, मनोहर पर बेसुरे ताल से डोंडी पिटवाया हुआ, महाराज शब्दों से सम्बोधित करता हुआ बहुत बार राजमार्ग में जल्दी–जल्दी उस अग्निशर्मा को घुमाता था।

इस प्रकार प्रतिदिन यमराज की तरह उस गुणसेन के द्वारा अपमानित किये जाते हुए उस अग्निशर्मा के (मन में) वैराग्य भावना उत्पन्न हो गयी। वह सोचने लगा–

गाथा– 6. 'पूर्व जन्म में पुण्यकर्म न करने वाले बहुत से लोगों के धिक्कार से पीड़ित और सब लोगों के उपहास योग्य पुरुष दूसरों के अपमान को सहते हैं।

7. पूर्वजन्म में मुझ मूढहृदय अधन्य के द्वारा, जो सज्जन पुरुषों के द्वारा आचरित, अत्यन्न सुख देने वाले धर्म का आचरण नहीं किया गया है।

8. सो अब पुण्य न करने वालों के इस तीव्र फलविपाक को देखकर मैं परलोक में बन्धु के समान मुनियों के द्वारा सेवित इस धर्म को करूँगा।

9. जिससे अगले जन्म में भी दुर्जन लोगों से समस्त लोगों के द्वारा उपहास किये जानी वाली इस प्रकार की विडम्बना को पुनः न करूँ।

इस प्रकार सोचकर वैराग्य को प्राप्त वह अग्निशर्मा नगर से निकला और एक महीने में उस प्रदेश की सीमा पर स्थित 'सुररितोश' नामक तपोवन को पहुँच गया। फिर वह तपोवन में प्रविष्ट हुआ। उसने तापसकुल के प्रधान आर्जव कोडन्य को देखा। देखकर उसने उनको प्रणाम किया। ऋषि ने उससे पूछा– 'आप कहाँ से आये हैं?' तब अग्निशर्मा विस्तार से अपना सब वृत्तान्त उन्हें कह दिया। तब ऋषि ने कहा– 'हे वत्स ! पूर्व–जन्मों में किये गये कर्मों

के परिणाम अपमान से पीड़ितों के लिए, दरिद्रता के दुःख से दुःखी लोगों के लिए, दुर्भाग्य के कलंक से उदास लोगों के लिए और इष्टजनों के वियोग की अग्नि में जले हुए लोगों के लिए यह आश्रम इस लोक और परलोक में सुख देने वाला तथा परम शान्ति का स्थान है। यहाँ पर –

गाया – 10. वनवासी सर्वथा धन्य हैं, जो आसक्तिजनित दुःख, लोगों के द्वारा किये अपमान और दुर्गति में गमन को नहीं देखते हैं।

इस प्रकार से उपदेश पाये हुए अग्निशर्मा ने कहा– 'भगवान्! ऐसी ही बात है, इसमें कोई संदेह नहीं है। अतः यदि आपकी मेरे ऊपर अनुकम्पा है और इस व्रत विशेष के लिए मैं उचित हूँ तो मुझे यह व्रत प्रदान करके अनुगृहीत करें।' ऋषि ने कहा– हे वत्स! तुम वैराग्यपथ के अनुगामी हो अतः मुझे तुम्हारा अनुरोध स्वीकार है। तुम्हारे सिवाय दूसरा कौन इस व्रत के लिय योग्य है। ऐसा कहकर तब कुदिन व्यतीत हो जाने पर अपने नियम और आचार विस्तार से समझाकर प्रशस्त तिथि, करण, मुहूर्त्त एवं लग्न में उस अग्निशर्मा को तापसदीक्षा दे दी गयी।

महान् तिरस्कार से उत्पन्न अतिशय वैराग्य भावना के कारण उस अग्निशर्मा ने उसी दीक्षा के दिन में ही समस्त तापस लोगों से घिरे हुए गुरू के समझ एक महाप्रतिज्ञा की कि– मैं जीवन–पर्यन्त एक माह के अन्तर से ही भोजन करूँगा। और पारणा के दिन सर्वप्रथम प्रविष्ट पहले घर से ही लौट आऊँगा। भिक्षा प्राप्त हो अथवा नहीं, दूसरे घर में नहीं जाऊँगा। और इस प्रकार प्रतिज्ञा लेने वाले तथा उसका उसी प्रकार पालन करने वाले उस अग्निशर्मा के बहुत से दिन व्यतीत हो गये।

अभ्यास

शब्दार्थ :

संछन्न–व्याप्त	तिय–तिराहा	चच्चरं–चौक
विलआ–स्त्री	वसणं–अभ्यास	इट्ट–मनपसन्द
आइण्ण–भरा हुआ	उत्तिमंग–सिर	वट्ट–गोल
चिविड–चपटी	बिलभेत्त–छेदमात्र	सिरोहर–गर्दन
मडह–छोटा	कंसालय–मंजीरे	रासह–गधा
कयत्थ–अपमान	पवन्न–प्राप्त	दूमिय–दुखी
संग–परिग्रह	संसिऊण–समझाकर	पसत्थ–अच्छा

वस्तुनिष्ठ प्रश्न :

सही उत्तर का क्रमांक कोष्ठक में लिखिए :

1. क्षितिप्रतिष्ठित नगर में लोगों का लोभ था–

   (क) धन में (ख) सन्तान में

   (ग) युद्ध में (घ) निर्मल यश में ( )

2. परलोक का एक मात्र बन्धु है–

   (क) महल (ख) धन–पैसा

   (ग) धर्म (घ) मित्र ( )

लघुत्तरात्मक प्रश्न :

प्रश्न का उत्तर एक वाक्य में लिखिए :

1. गुणसेन के माता–पिता का क्या नाम था?
2. अग्निशर्मा किस बात से दुखी था?
3. अपमान से छुटकारा पाने के लिए अग्निशर्मा ने क्या किया?
4. तपोवन में अग्निशर्मा ने क्या प्रतिज्ञा की?

निबन्धात्मक प्रश्न :

(क) क्षितिप्रतिष्ठित नगर का वर्णन अपने शब्दों में करो।

(ख) अग्निशर्मा की कुरुपता का वर्णन करो।

(ग) गुणसेन अग्निशर्मा को कैसे सताता था, संक्षेप में लिखो।

(घ) अग्निशर्मा की वैराग्य भावना को संक्षेप में लिखो।

4. धणदेवस्स पुरिसत्थ (कुवलयमालाकहा)

पाठ परिचय :

आचार्य उद्द्योतनसूरि भारतीय वाङ्मय के बहुश्रुत विद्वान् थे। उनकी एकमात्र कृति कुवलयमालाकहा उनके पाण्डित्य एवं सर्वतोमुखी प्रतिभा का पर्याप्त निकष है। उन्होंने न केवल सिद्धान्तग्रन्थों का गहन अध्ययन और मनन किया था, अपितु भारतीय साहित्य की परम्परा और विद्याओं के भी वे ज्ञाता थे। अनेक प्राचीन कवियों की अमर कृतियों का अवगाहन करने के अतिरिक्त लौकिक कलाओं और विश्वासों के भी वे जानकार थे। अतः उनकी कुवलयमालाकहा सिद्धान्त, साहित्य और लोक–संस्कृति के सुन्दर सामंजस्य का प्रतिफल है।

उद्द्योतनसूरि की शैक्षणिक गुरुपरम्परा में दो नाम उल्लिखित हैं। सिद्धान्त–ग्रन्थों का अध्ययन उद्द्योतनसूरि ने आचार्य वीरभद्र से किया, जो कल्पवृक्ष की भाँति सभी प्रश्नों को समाहित करने की क्षमता रखते थे। तथा लेखक के प्रमाण और न्याय (युक्तिशास्त्र) के गुरु आचार्य हरिभद्रसूरि थे, जिन्होंने समराइच्चकहा आदि अनेक ग्रन्थ लिखे हैं।

उद्द्योतनसूरि ने कुवलयमाला में अपनी विनयशीलता व्यक्त की है तथा सम्भावित भूलों की ओर भी संकेत किया है, इससे उनकी काव्यप्रतिभा और उभरकर सामने आयी है। नगर, ऋतु, प्राकृतिक दृश्यों आदि के वर्णन जितने काव्यात्मक हैं, उतने ही लुभावने। कथा के वातावरण एवं सन्दर्भ के अनुकूल भी। लेखक प्राकृत भाषा के प्रयोग में सिद्धहस्त है। पात्रों की सामाजिक एवं व्यक्तिगत योग्यता के अनुरूप ही उनके कथनोपकथन निर्मित किये गये हैं। एक ही ग्रन्थ में प्राकृत के विविध रूपों एवं संस्कृत, अपभ्रंश, पैशाची और देशी भाषाओं के शब्दों का बहुविध प्रयोग उद्द्योतनसूरि की भाषागत सजगता का प्रतीक है।

कुवलयमाला के रचना–स्थल के सम्बन्ध में भी उद्द्योतनसूरि ने स्पष्ट उल्लेख किया है। उद्द्योतनसूरि आचार्य वीरभद्र के साक्षात् शिष्य थे। आचार्य वीरभद्र जावालिपुर (जालौर) में निवास करते थे, जहाँ के राजा का नाम श्री वत्सराज रणहस्तिन् था। वीरभद्र आचार्य ने जावालिपुर में ऋषभ जिनेश्वर का एक भव्य ऊँचा मंदिर बनवाया था। इसी मंदिर के उपासरे में बैठकर उद्द्योतनसूरि ने कुवलयमालाकहा की रचना की थी।

कुवलयमाला में उल्लिखित यह जावालिपुर आधुनिक जालौर है, जो जोधपुर नगर से 75 मील दूर सुकरी नदी के बायें किनारे पर स्थित है। जालौर वर्तमान में भिल्लमाल से 33 किलोमीटर दूर भिलदी–रनिवार–समदरी रेल्वेलाइन का स्टेशन है। उद्द्योतनसूरि ने जावालिपुर को तुंग अलंघ अष्टापदम् व श्रावककुलम् विशेषण से युक्त कहा है। वर्तमान में जालौर नगर सोवनगिरि या सोनगिरि पहाड़ी की तलहटी में बसा है, जो प्राचीन अनुश्रुति के अनुकुल है।

पाठ :

1. अत्थि इमम्मि चेय लोए जंबूदीवे भारहे वासे वेयड्ढ–दाहिणमज्झिमखंडे उत्तरावहं णाम पहं। तत्थ तक्खसिला णाम णयरी। तीए य णयरीए पच्छिम–दक्खिणे दिसाभाए उच्चत्थलं णाम गामं, सग्गणयरं पिव सुरभवणेंहि, पायालं पिव विविहरयणेहिं, गोट्ठंगणं पिव गो–संपयाए, धणयपुरीविय धण–संपयाए त्ति।

2. तम्मि गामे सुद्द–जाइओ धणदेवो णाम सत्थवाहउत्तो। तत्थ तस्स सरिस सत्थबाहउत्तेहिं सह कीलंतस्स बच्चए कालो। सो पुण लोहपरो अत्थगहण–तल्लिच्छो मायावी वंचओ अलियवयणो पर–दव्वावहारी। तओ तस्स एरिसस्स तेहिं सरिस–सत्थवाहजुवाणेहिं धणदेवो ति अवहरिउं लोहदेवो त्ति से पइट्ठियं णामं। तओ कय–लोहदेवाभिहाणो दियहेसु वच्चंतेसु महाजुवा जोग्गो संवुत्तो।

3. तओ उद्धाइओ इमस्स लोभो बाहिउंपयत्तो, तम्हा भणिओ य णाण जणओ–'ताय! अहं तुरंगमे धेत्तूण दक्खिणावहं वच्चामि। तत्थ बहुयं अत्थं विढवेमो। जेण सुहं उवभुंजामो' त्ति।

4. भणियं च से जणएण–'पुत्त! केत्तिएण ते अत्थेण ? अत्थि तुहं महं पि पुत्त–पवोत्ताणं पि विउलो अत्थसारो। ता देसु किवणाणं, विभयसु वणीमयाणं, दक्खेसु बंभणे, कारावेसु देवउले, खाणेसु तलाय–बंधे, बांधावेसु वावीओ, पालेसु सत्तायारे, पयत्तेसु आरोग्ग–सालाओ, उद्धरेसु दीण–विहले त्ति। ता पुत्त! अलं देसंतर–गएहिं।'

5. भणियं च लोहदेवेणं–'ताय! जं एत्थ चिट्ठइ तं साहीणं चिय, अण्णं अपुव्वं अत्थं आहरामि बाहु–बलेणं ति।' तओ तेण चिंतियं सत्थवाहेणं–'सुंदरो चेय एस उच्छाओ। कायव्वमिणं, जुत्तमिणं, सरिसमिणं धम्मो चेय अम्हाणं जं अउव्वं अत्थागमणं कीरइ त्ति। ता ण कायव्वो मए इच्छा–भंगो, ता दे वच्चउ' ति चिंतिउं तेण भणिओ– 'पुत्त! जइ ण ट्ठायसि, तओ वच्च।'

6. एवं भणिओ पयत्तो। सज्जीकया तुरंगमा, सज्जियाइं जाण–वाहणाइं, गहियाइं पच्छयणाइ चित्तविया आडियत्तिया, संठविओ कम्मयरजणो, आउच्छिओ गरुयणो, वंदिया रोयणा, पयत्तो सत्थो, चलियाओ वलत्थाउ। तओ भणिओ सो पिउणा–'पुत्त! दूरं देसंतरं, विसमा पंथा, णिट्ठुरो लोओ, बहुए दुज्जणा, विरला सज्जणा, दुप्परियल्लं भंडं, दुद्धरं जोव्वणं, दुल्ललिओ तुमं, विसमा कज्जगई, अणत्थरुई कयंतो, अणवरद्ध–कुद्धा चोर त्ति। ता सव्वहा कहिंचि पंडिएणं कहिंचि मुक्खेण, दक्खिणेण, कहिंचि रिट्ठुरेण, कहिंचि दयलुणा कहिंचि णिक्किवेणं, कहिंचि सूरेणं, कहिंचि कायरेण कहिंचि चाइणा, कहिंचि किमणेणं, कहिंचि माणिणा, कहिंचि दीणेणं, कहिंचि वियड्ढेणं, कहिंचि जडेणं।' एवं च भणिऊण णियत्तो सो जणओ।

7. इमो वि लोहदेवो संपतो दक्खिणावहं केण वि कालं तरेण। समावासिओ सोप्पारए णयरे भद्दसेट्ठीणाम जुझणसेट्ठी तस्स गेहम्मि। तओ केण वि कालंतरेण महग्घ–मोल्ला दिण्णा ते तुरंगमा। विढत्तं महंतं अत्थसंचयं। तं च धेत्तूणं सदेसहुत्तंगंतुमणो सो सत्थवाहपुत्तो त्ति।*

* कुवलयमालाकहा, पृष्ठ 64–65।

हिन्दी

इस लोक में जम्बूद्वीप में भारतवर्ष में वैताढ्य के दक्षिण मध्यम खण्ड में उत्तरापथ नामक पथ है। वहाँ तक्षशिला नामक नगरी है। उस नगरी के पश्चिम दक्षिण दिशाभाग में उच्चस्थल नामक गाँव है, जो देव भवनों से स्वर्ग नगर की तरह विविध रत्नों से पाताल की तरह, गौ–सम्पदा से गौओं के निवास–स्थान की तरह तथा धन सम्पदा से ध नकपुरी की तरह है।

उस गाँव मैं शूद्र जाति का धनदेव नामक सार्थवाह (बड़े व्यापारी) का एक पुत्र था। वहाँ अपने जैसे सार्थवाह पुत्रों के साथ खेलते हुए उसका समय व्यतीत होता था। किन्तु वह लोभी, धन ग्रहण करने वाला था। तब उसके समान सार्थवाह युवकों के द्वारा ऐसे उसका धनदेव नाम बदलकर लोभदेव नाम प्रतिष्ठित कर दिया गया। तब लोभदेव नाम वाला वह दिनों के बीतने पर बड़े युवक की तरह हो गया।

तब बाहर जाने के लिए इसके लोभ उत्पन्न हुआ, इसलिए उसने अपने पिता से कहा – हे पिता ! घोड़े लेकर दक्षिणापथ को जाऊँगा और वहाँ बहुत अधिक धन कमाऊँगा, जिससे सुख का उपभोग करेंगे।'

ऐसा कहने पर उसके पिता ने कहा– 'हे पुत्र! तुम्हे धन से क्या प्रयोजन? तुम्हारे और मेरे पुत्र–पौत्रों के लिए भी विपुल सारयुक्त धन मेरे पास है। इसलिए गरीबों को दान दो, याचकों की माँग पूरी करो, ब्राह्मणों को दक्षिणा दो, मंदिरों को बनवाओ, तालाब और बाँध खुदवाओ, वापियों को बँधवाओ, निशुल्क भोजनशालाओं को चलाओ, औषधालयों को बनवाओ, दीन एवं विहवल लोगों का उद्धार करो, किन्तु हे पुत्र! विदेश जाने से रहने दो।'

तब लोभदेव ने कहा– हे पिता! जो यहाँ है वह तो अपने अधीन है ही। किन्तु अपनी बाहुओं के पुरुषार्थ से अन्य अपूर्ण धन कमाना चाहता हूँ। तब उस सार्थवाह ने सोचा– इसका उत्साह ठीक ही है। यह करने योग्य, उचित एवं हमारे अनुकूल है। हमारा धर्म ही है– अपूर्ण धन कमाना। इसलिए मुझे इसकी इच्छा को नहीं तोड़ना चाहिए। अतः यह जाये– ऐसा सोचकर उसने कहा– हे पुत्र! यदि तुम नहीं रुक सकते तो जाओ।

ऐसा कहे जाने पर वह जाने तैयार हो गया। घोड़े सजाये गये। गड़ीवान सज्जित की गयी, रास्ते का खाना रखा गया, दलालों को सूचना दी गयी, मजदूर लोगों को एकत्र किया गया, गुरूजनों से पूछा गया, दिशा – देवता की वन्दना की गयी, सार्थ तैयार हुआ और जल्दी से चल पड़ा तब उसके पिता ने उसे कहा – हे पुत्र ! देशान्तर दूर है, रास्ते भयानक हैं, लोग निष्ठुर हैं, दुर्जन अधिक हैं, सज्जन विरले हैं, मित्र कठिनता से मिलते हैं, यौवन कठिन है, बडी मुश्किल से तुम पाले गये हो, कार्यो की गति विषम है यौवन कठिन है, बड़ी मुश्किल से तुम पाले गये हो, कार्यो की गति विषम है, यमराज अनर्थ करने वाला है, क्रोधी चोर निरन्तर मिलते हैं। इसलिए कहीं पर पण्डिताई से, कहीं पर मूर्खता से, कहीं चतुरता से, कही नि ठुरता से कही दयालुता से, कहीं निर्दयता से कहीं शूरता से, कहीं कायरता से कहीं त्याग से कहीं कंजूसी से, कहीं कान से, कहीं दीनता से, कहीं बुद्धिमानी से और कहीं मूर्खता से (अपना कार्य सिद्ध करना)। ऐसा कहकर वह पिता वापिस लौट गया।

वह लोभदेव किसी समय के बाद दक्षिणापथ को पहुँचा। वहाँ सोपारक नगर में भद्रश्रेष्ठि नामक पुराने सेठ के घर में वह ठहरा। तब कुछ समय के बाद उसने अत्यधिक मोल से उन घोड़ो को बेच दिया। उससे बहुत अधिक धन का संचय किया। और उसको लेकर अपने देश की ओर वह सार्थवाह–पुत्र जाने को तैयार हो गया।

अभ्यास

शब्दार्थ :

सग्ग–स्वर्ग	धणय–कुबेर	सुद्दजाइ–शूद्र जाति
तल्लिच्छ–तल्लीन	अलिय–झूठ	पइट्ठियं–रख दिया
उद्वाइओ–उत्पन्न करना	पवोत–प्रपौत्र	खाण–खुदाना
आउयत्तिय–दलाल	कयंत–यमराज	णियत्त–लौटना

लघुत्तरात्मक प्रश्न :

प्रश्न का उत्तर एक वाक्य में लिखिए :

1. धनदेव का नाम लोभदेव क्यों रखा गया ?
2. धनदेव के पिता ने उसे विदेश जाने से क्यों रोका ?
3. अन्त में पिता ने क्या सोचकर धनदेव को अनुमति दे दी ?

निबन्धात्मक प्रश्न :

(क) धनदेव के पिता ने किन कार्यों में धन खर्च करने के लिए कहा था ?

(ख) विदेश जाते समय धनदेव को उसके पिता ने क्या शिक्षा दी थी ?

(ग) धनदेव कहाँ गया और उसने कैसे धन कमाया ?

5. जहा गुरू तहा सीसो (रयणचूड़रायचरियम्)

पाठ परिचय :

नेमिचन्द्रसूरि ने उत्तराध्ययनसुखबोधाटीका आदि ग्रन्थों के अतिरिक्त लगभग 11वीं शताब्दी में चन्द्रवती नगरी (राज.) में रयणचूडरायचरियं नामक चरितग्रन्थ भी लिखा है। इस ग्रन्थ में रत्नचूड राजा के पूर्व–जन्म एवं जीवन–चरित आदि का वर्णन है। प्रसंगवश अन्य लौकिक कथाएं भी हैं।

यह कथा स्वप्न की सत्यता का निराकरण करने के लिए कही गयी है। एक मठ के आचार्य ने स्वप्न में मठ के कमरों को मिष्ठान से भरा हुआ देखा। नींद खुलने पर उन्होंने यह बात अपने शिष्य से कही। उस शिष्य ने स्वप्न के मिष्ठान्न को खिलाने के लिए सारे गांव को निमन्त्रण कर दिया। अन्त में लोगों के सामने उन्हें अपनी मूर्खता पर अपमानित होना पड़ा।

पाठ :

1. एगम्मि गामे बहु–वक्खारिगे मढे एग–सीसेण संजुओ परमायरिओ वसइ। अन्नया तेण रयणीए सुविणे दिट्ठा–मोयगपडिपुन्ना वक्खारिगा। विउद्धेण संहरिसं साहियं चेल्लगस्स। तेण भणियं–'जइ एवं ता निमंतेमो अज्ज गामं। भुत्तपुव्वं बहुसो गामगिहेसु।'

2. एवं ति पडिवन्ने गंतूण उक्कुरुडियाए निमंतिओ सठक्कुरो गामो चिल्लगेण। 'कत्थ तुम्ह भोयणसामग्गि,' त्ति ? अणिच्छन्तो वि धम्माणुभवेण सव्वं भविस्सइ' त्ति बला मन्नाविओ। कारावेिओ भोयणमंडवो ठावियाओ आसणपंतीओ। उचियवेलाए समागओ गामलोओ। उवविट्ठो आसणेसु दिन्नाइं भायणाइं।

3. एत्थंतरे पविट्ठो मोयगनिमित्तमब्भन्तरे परसमायरिओ। जाव न किंचि तत्थ पेच्छइ। तओ 'अदन्नचित्तो भुल्लो अहं मोयगवक्खारियाए, तो पुणो वि तद्दंसणात्थं सुवामि। तं पुण लोगरोलं निवारेहि' त्ति भणिऊण चेल्लयं सो पसुत्तो।

4. एत्थंतरे लोएहिं भणियं–'छुहाइओ जणो, उस्सूरं च वट्टइ ता किं चिरावेह ?' चेल्लिएण भणियं–'मा रोलं करह, जा मे गुरु निद्दं लहइ त्ति।' तेहिं भणियं–'को सुवणकालो ?' चेल्लिएण भणियं–'तुम्ह भोयणट्ठा सुविणोवलद्धमोयगवक्खारिगाए भुल्लो, पुणो तद्दंसणत्थं सुवइ' त्ति।

5. एवं सोऊण–'अहो मुरुक्खा एए' त्ति दिन्न करतालो हसमाणो गओ लोगो सभवणेसु। ता न सुविणयं दिट्ठं पारमत्थियं ति।*

* रयणचूडरायचरियं (सं.–विजयकुमुदसूरि), खम्भात, 1942, पत्र 28 से साभार।

हिन्दी

एक गाँव में बहुत से कोठों से युक्त एक मठ मैं एक शिश्य के साथ बड़ा आचार्य रहता था। एक बार उसने रात्रि में स्वप्न देखा कि– मठ के सभी कोठे (बखरी) लड्डुओं से भरे हुए हैं। जगने पर उसने प्रसन्नतापूर्वक यह बात अपने शिष्य से कही। उसने कहा– 'यदि ऐसा है तो आज हम पूरे गाँव को निमन्त्रण कर देते हैं। गाँव के घरों में हमने बहुत बार खाया है।'

'ठीक है' स्वीकार करने पर घूरे पर जाकर उस चेले ने मुखिया समेत पूरे गाँव को निमन्त्रण दे दिया। 'तुम्हारे

यहाँ भोजन सामग्री कहाँ से आयी ? ऐसा पूछे जाने पर भी धर्म प्रभाव से सब होगा' ऐसा कहकर शिष्य द्वारा बलपूर्वक उन्हें मना लिया गया। भोजन का मण्डप बनवाया गया। आसन– पंक्तियाँ बिछायी गयीं। उचित समय पर गाँव के लोग भी आ गये। आसनों पर बैठ जाने पर उन्हे भोजन–पात्र भी दे दिये गये।

इसी समय में वह परम आचार्य लड्डुओं के लिए भीतर घुसा। किन्तु वहाँ कुछ भी नहीं देखता है। तब चित न लगने से मैं लड्डुओं वाले कमरे को भूल गया हूँ। अतः देखने के लिए फिर सो जाता हूँ। तब तक तुम लोगों के शोरगुल को रोकना।' चेला को ऐसा कहकर वह आचार्य सो गया।

इस बीच में लोगों ने कहा– 'लोग भूखे हैं, शाम हो रही है अतः देर क्यों की जा रही हैं ? चेले ने कहा – 'शोर मत करो, क्योंकि मेरे गुरू नींद ले रहे हैं।'

ऐसा सुनने पर लोगों ने कहा – 'यह सोने का कौन–सा समय है?' चेले ने कहा– 'आप लोगो के भोजन के लिए स्वप्न में देखे गये लड्डुओं का कोठा गुरूजी भूल गये थे। अतः फिर से उसे देखने के लिए अब सो गये है। ऐसा सुनकर– अहो ! इनकी मूर्खता? ऐसा कहकर ताली बजाते हुए हँसते हुए लोग अपने घरों को चले गये। इसलिए स्वप्न में देखा हुआ स्थायी नहीं होता।

अभ्यास

शब्दार्थ :

बक्खारिग–कोठा	सुविण–स्वप्न	बिउद्ध–जागना
साह–कहना	चेल्लग–चेला	उक्कुरुडिया–घूरा
बला–वलपूर्वक	भायण–बर्तन	सुव–सोना
रोलं–शोरगुल	उस्सूर–सन्ध्या	मुरुक्खा–मूरख
करताल–ताली	एए–ये लोग	दिट्ठं–देखा हुआ

लघुत्तरात्मक प्रश्न :

प्रश्न का उत्तर एक वाक्य में लिखिए :

1. इस पाठ का मूल उद्देश्य क्या है ?
2. गांव के लोगों के लिए भोजन–सामग्री कहाँ थी ?
3. गांव के लोगों के आ जाने पर मठ का गुरु क्यों सो गया ?
4. असलियत जानने पर लोगों ने क्या कहा ?

4. (ख)

प्राकृत पद्य संग्रह

(पाइय पज्ज–संगहो)

पाठ –1

कुमाराण बुद्धि–परिक्खणं

पाठ–परिचय :

आख्यानकमणिकोश में बुद्धि की परीक्षा के लिए अभयकुमार का आख्यान दिया गया है। प्राकृत कथा साहित्य में राजा प्रसेनजित के पुत्र श्रेणिक या बिम्बसार की योग्यता का बहुत वर्णत मिलता है। इस राजा श्रेणिक का विवाह सुनन्दा के साथ होता है। उन दोनों के जो पुत्र होता है उसका नाम अभयकुमार है। अभयकुमार से सम्बन्धित कई कथाएँ प्राकृत में हैं। आख्यानकमणिकोश में 278 गाथाओं में अभयकुमार का कथानक वर्णित है।

डॉ. के. आर. चन्द्रा ने अभयक्खाणयं नामक पुस्तक में अभयकुमार के कथानक को संक्षेप में प्रस्तुत किया है। उसी में से प्रसेनजित राजा द्वारा अपने पुत्रों की बुद्धि की परीक्षा लेने का प्रसंग इन गाथाओं में यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।

अह अन्नया कयाई रयणीए पच्छिमम्मि जाममि।
सुहसंबुद्धो चिंतिउमारद्धो नरवई एवं।।1।।

मज्झ कुमराण मज्झे होही को धरधुराधरणधीरो।
सेसो व महाभोगो चूडामणिरंजियसिरग्गो।।2।।

इय चिंतिऊण सिंधुर–तुरंगमाउज्ज–रहवराइन्नं।
पज्जालावइ सयलं चउद्दिसिं जिन्नसालगिहं।।3।।

तं नियवि जलणजालाकरालियं भणइ भूवई कुमरे।
रे रे ! जो जं गेण्हइ दिन्नं तं तस्स सव्वं पि।।4।।

रायाएसं निसुणिउ तड–यड–फुट्टंतवंससंदोहे।
कड्ढन्ति पलित्ते पविसिऊण कुमरा गइंदाई।।5।।

सेणिय–कुमरेण पुणो पविसिय पजलंतमंदिरस्संतो।
गहिया भिंभाभिहाणा दक्खेण झडत्ति जयढक्का।।6।।

तं मच्छरेण करकलियभिंभमवलोइउं इयरकुमरा।
उवहासेण पयंपन्ति सेणियं भिंभसारो त्ति।।7।।

तं दट्ठूण नरिंदेण चिंतियं सेणिएण साहु कयं।
पढममिणं रज्जंगं संगहिया जेण जयढक्का।।8।।

अह अन्नया परक्कम–चाय–परिक्खणकए कुमाराण।
काराविय परमन्नं भोएइ निवो नियकुमारे।।9।।

परमन्नं परिवेसिय निवेण लिल्लिक्किओ सुयणवग्गो।
सम्मुहमागच्छंतं तं नियवि पलाइया इयरे।।10।।

सेणियकुमरो इयराणमुभयपासट्ठिए गहियथाले।
सुणयाण खिवइ जेमेइ अप्पणा भयविमुक्कमणो।।11।।

तव्वइयरमवलोइय चिंतेइ पमोइओ पुहइपालो।
एसो उदारवीरो त्ति कायरा इयरकुमरा मे।।12।।

अवर समयम्मि राया बुद्धि–परिक्खणकए कुमाराण।
मुद्देइ गणिय–लड्डुय–करंडए सलिलकलसे य।।13।।

हक्कारिउं तओ ते भणेइ वच्छ! सबुद्धिविहवेण।
मुद्दमभंजिय भुंजेह मोयगे पियह सलिलं पि।।14।।

एवं वुत्ता नियबुद्धिगव्विया वि य उवायमलभंता।
ते छुह–पिवाससोसियगत्ता दीणत्तमणुपत्ता।।15।।

सेणिय कुमरेण पुणो घेत्तुं पगलंत–कलसबिंदुजलं।
धुणिउं करंडए मोयगाण चूरीए भोयविया।।16।।

इय निसुणिऊण सेणियमइविहवं विम्हिओ महाराओ।
चिंतेइ जहा जुत्तो एसो रज्जाहिसेयस्स।।17।।

हिन्दी

1. इसके बाद एक बार कभी रात्रि के अन्तिम पहर में सुखपूर्वक जगा हुआ राजा (प्रसेनजित) इस प्रकार सोचने लगा।

2. मेरे राजकुमारों के बीच में कौन (राजकुमार) चूड़ामणि से सुशोभित फण के अग्रभाग वाले महानागशेष की तरह पृथ्वी की धुरा को धारण करने में समर्थ होगा?

3. ऐसा सोचकर हाथी, घोड़े, शस्त्र, रथ आदि से भरे हुए सम्पूर्ण पुराने शस्त्रागार को उसने चारों दिशाओं से आग लगवा दी।

4. उस अग्नि की भयंकर ज्वाला को देखकर राजा राजकुमारों को कहता है– 'अरे राजकुमारों ! (इस आग में से) जो (कुमार) जो कुछ भी प्राप्त करता है वह सब उसे दे दिया जायेगा।'

5. राजा के आदेश को सुनकर राजकुमार तड़–तड़ की आवाज करते हुए, जलते हुए बांसों के उस घर में घुसकर हाथी आदि को निकाल लेते हैं।

6. किन्तु राजकुमार श्रेणिक के द्वारा जलते हुए उस मकान के भीतर प्रवेशकर शीघ्र ही चतुरता से बिम्ब नामक जयढक्का (नगाड़ा) प्राप्त कर ली गयी।

7. दूसरे राजकुमार मजाक में उपहास करते हुए हाथ में ली हुई (उस) बिम्ब (नगाड़ा) वाले श्रेणिक को 'बिम्बसार' कहते हैं।

8. इसको देखकर राजा ने सोचा– 'श्रेणिक के द्वारा अच्छा किया गया है जो कि राज्य के इस प्रथम अंग जयढक्का को प्राप्त किया गया।'

9. इसके बाद (कभी) एक बार राजकुमारों के पराक्रम, त्याग की परीक्षा करने के लिए राजा पकवान बनवाकर अपने कुमारों को भोजन करवाता है।

10. पकवान परोसकर राजा के द्वारा कुत्तों के झुण्ड को (वहाँ) बुलवाया गया। दूसरे (राजकुमार) उनको आता हुआ देखकर भाग गये।

11. किन्तु कुमार श्रेणिक दोनों बगलों में स्थित दूसरे राजकुमारों की थालियों को लेकर कुत्तों के लिए फेंक देता है और भय से रहित मनवाला (वह) स्वयं की थाली जीमता रहता है।

12. उस वृतान्त को देखकर आनन्दित हुआ राजा सोचता है– 'यह (श्रेणिक) उदार है और वीर है (तथा) मेरे अन्य राजकुमार कायर हैं।'

13. किसी दूसरे अवसर पर राजकुमारों की बुद्धि की परीक्षा करने के लिए (राजा) गिने हुए लड्डुओं की टोकरियों और पानी के कलशों को सीलबन्द करा देता है।

14. तब उन (राजकुमारों) को बुलवाकर कहता है– 'हे पुत्र ! अपनी बुद्धि के वैभव से सील तोड़कर लड्डुओं को खाओ और पानी को भी पिओ।'

15. ऐसा कहे गये अपनी बुद्धि के घमण्डी वे (राजकुमार) उपाय को न प्राप्त करते हुए भूख–प्यास से सूखे शरीर वाले (होकर) दीनता को प्राप्त हुए।

16. किन्तु श्रेणिक कुमार के द्वारा कलशों से झरती हुई बूंदों के जल को लेकर और टोकरियों को हिलाकर (उनसे गिरी हुई) लड्डुओं की चूरी से भोजन कर लिया गया।

17. श्रेणिक की बुद्धि के वैभव को इस प्रकार सुनकर आश्चर्य युक्त महाराजा सोचता है कि राज्याभिषेक के लिए यह (श्रेणिक) योग्य है।

,,,

अभ्यास

1. शब्दार्थ :

जाम	=	पहर
महाभोगो	=	महानाग
आइन्नं	=	भरा हुआ
जिन्न	=	पुराना
नियवि	=	देखकर
झडत्ति	=	शीघ्र
मच्छरेण	=	ईर्ष्या से
इणं	=	यह
रज्जंग	=	राज्य के अंग
चाय	=	त्याग
भोएइ	=	भोजन करता है
पासट्ठिए	=	पास में स्थित
सुणयं	=	कुत्ता
वइयरं	=	वृत्तान्त

पमोइओ = आनन्दित

पगलंत = झरते हुए

करंड = टोकरी

विम्हिओ = आश्चर्यचकित

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए –

(क) शब्दरूप	**मूलशब्द**	**विभक्ति**	**वचन**	**लिंग**
रयणीए	रयणी	षष्ठी	ए.व.	स्त्री.
मराण	.....	.....	.....	.....
उवहासेण	.....	.....	.....	.....
करंडए	.....	.....	.....	.....

(ख) संधिवाक्य	**विच्छेद**	**संधिकार्य**
चिंतिउमारद्धो	चितिउं + आरद्धो	अनुस्वार को म
रायाएसं	..... + ...	.....
मन्दिरस्संतो	मंदिरस्स + अंतो	अ+अ = अ
भिंभाभिहाणा	..... + ...	.....
पढमभिणं	..... + ...	.....

(ग) समासपद	**विग्रह**	**समासनाम**
सुहसंबुद्धो	सुहेण + संबुद्धो	तृतीया तत्पुरुष
धरधुरा	..... + ...	.....
भयविमुक्कमणो	..... + ...	.....
उदारवीरो	..... + ...	.....
सलिलकलसे	..... + ...	.....

(घ) क्रियारूप	**मूल क्रिया**	**काल**	**पुरुष**	**वचन**
भणइ	भण	वर्तमान	अ.पु.	ए.व.
कड्ढन्ति	.....	.....	.....	.....
भुजेह	.....	.....	.....	.....
पियह	.....	.....	.....	.....

(ङ) कृदन्त मूलक्रिया अर्थ पहिचान प्रत्यय

दिन्न अनियमित दे दिया गया भूतकाल

निसुणिउ निसुण सुनकर सम्बन्ध इ+उ

फुट्टंत फुट्ट आवाज करते हुए वर्तमान न्त

परिवेसिय परिवेस रोसकर सं. कृ. इ+य

3. वस्तुनिष्ठ प्रश्न

सही उत्तर का क्रमांक कोष्ठक में लिखिए –

1. श्रेणिककुमार ने जलते हुए घर में से निकाला –

(क) रथ को (ख) हाथी को

(ग) शास्त्र को (घ) भिंभसार जयढक्का को ( )

2. खीर खाते समय कुमारों के पास राजा ने –

(क) सैनिकों को भेजा (ख) कुत्तों के झुण्ड को बुलवाया

(ग) और भोजन भिजवाया (घ) नौकरों को भेजा ( )

4. लघुत्तरात्मक प्रश्न –

प्रश्न का उत्तर एक वाक्य में लिखिए –

1. कुत्तों के आक्रमण पर श्रेणिक ने क्या किया?
2. श्रेणिक ने लड्डू कैसे खाये?
3. राजा ने राज्याभिषेक के लिए श्रेणिक को क्यो चुना?

5. निबन्धात्मक प्रश्न एवं विशदीकरण :

(क) राजकुमारों की परीक्षाओं का वर्णन 8–10 पंक्तियों में कीजिए।

(ख) इस पाठ की शिक्षा अपने शब्दों में लिखिए।

(ग) गाथा नं. 8 अथवा 11 का अर्थ संदर्भ सहित समझाकर लिखिए।

पाठ –2

सहलं मणुजम्मं

पाठ–परिचय :

प्राकृत भाषा में ऐसे व्यक्तियों के जीवन–चरितों का वर्णन हुआ है, जिन्होंने अच्छे कार्यों के द्वारा अपने जीवन को श्रेष्ठ बनाया है। ऐसे काव्यों को चरितकाव्य कहा गया है। प्राकृत में लगभग तीसरी–चौथी शताब्दी में विमलसूरि ने 'पउमचरिय' नामक प्रथम चरितकाव्य लिखा, जिसमें मर्यादापुरुषोत्तम रामचन्द्र के जीवन का वर्णन है। इसके बाद कई चरितकाव्य लिखे गये हैं। लगभग 15वीं शताब्दी में **अनन्तहंस ने कुम्मापुत्तचरियं** नामक ग्रन्थ लिखा है। इस चरितकाव्य में राजा महेन्द्र सिंह और रानी कुर्मा के पुत्र धर्मदेव के पूर्वजन्मों एवं वर्तमान जन्म की कथा वर्णित है।

धर्मदेव को एक साधु पुरुष मनुष्य–जन्म का महत्त्व बतलाता है। वह कहता है कि मनुष्य–जन्म अन्य पशु, पक्षी आदि के जन्म से कई अर्थों में श्रेष्ठ है। अतः इस मनुष्य जन्म में आकर अच्छे कार्य करना चाहिए। इस जन्म को व्यर्थ के कार्यों में गंवाना ठीक नहीं है। इस बात की पुष्टि के लिए वणिक्पुत्र का उदाहरण दिया गया है।

कोई वणिक्पुत्र बड़ी कठिनाई और परिश्रम के बाद एक चितामणिरत्न को विदेश में जाकर प्राप्त करता है। यह रत्न मनवाँछित फल को देने वाला है। जब वह वणिक्पुत्र जहाज से समुद्र पार कर रहा था तब रात्रि में चन्द्रमा के प्रकाश और रत्न के प्रकाश की वह तुलना करने लगता है। इसके लिए वह हाथ में रत्न को लेकर देख रहा था कि रत्न फिसलकर समुद्र में गिर गया और बहुत खोजने पर फिर नहीं मिला। इसी प्रकार मनुष्य–जन्म को यदि अच्छे कार्यों से सफल नहीं किया तो वह भी व्यर्थ चला जाता है।

एगम्मि नयरपवरे अत्थि कलाकुसलवाणिओ को वि।
रयणपरिक्खागंथं गुरूण पासम्मि अब्भसइ।।1।।

अह अन्नया विचिंतइ सो वणिओ किमवरेहि रयणेहिं।
चिंतामणी मणीणं सिरोमणी चिंतिअत्थकरो।।2।।

तत्तो सो तस्स कए खणेइ खाणीओ णेगठाणेसुं।
तह वि न पत्तो स मणी विविहेहिं उवायरकणेहि।।3।।

केण वि भणिअं वच्चसु वहणे चडिऊण रयणदीवंमि।
तत्थत्थि आसपूरी देवी तुह वंछियं दाही।।4।।

सो तत्थ रयणदीवे संपत्तो इक्कवीस–खवणेहिं।
आराहइ तं देविं संतुट्ठा सा इमं भणइ।।5।।

भो भद्द केण कज्जेण अज्ज आराहिआ तए अहयं।
सो भणइ देवि चिंतामणिकए उज्जमो एसो।।6।।

दत्तं चिंतारयणं तो तीए तस्स रयणवणिअस्स।
सो निअगिहगमणत्थं संतुट्ठो वाहणे चडिओ।।7।।

पोअपएसनिविट्ठो वणिओ जा जलहिमज्झमायाओ।
ताव य पुव्वदिसाए समुग्गओ पुण्णिमाचन्दो।।8।।

तं चंदं दट्ठूणं नियचित्ते चिंतए स वाणियओ।
चिंतामणिस्स तेअं अहिअं अहवा मयंकस्स।।9।।

इअ चिंतिऊण चिंतारयणं निअकरतले गहेऊणं।
नियदिट्ठीइ निरक्खइ पुणो पुणो रयणमिंदुं य।।10।।

इअ अवलोअंतस्स य तस्स अभग्गेण करतलपएसा।
अइसुकुमालमुरालं रयणं रयणायरे पडिअं।।11।।

जलनिहिमज्झे पडिओ बहु बहु सोहंतएण तेणावि।
किं कह वि लब्भइ मणी सिरोमणी सयलरयणाणं।।12।।

तह मणुअत्तं बहुविहभवभमणसएहि कहकह वि लद्धं।
खणमित्तेणं हारइ पमायभरपरवसा जीवो।।13।।

'''

हिन्दी

1. किसी एक श्रेष्ठ नगर में कलाओं में कुशल कोई (एक) व्यापारी था। (वह) गुरुओं के पास में रत्न–परीक्षा ग्रन्थ का अभ्यास करता है।

2. इसके बाद किसी एक दिन वह व्यापारी सोचता है कि अन्य रत्नों से क्या (लाभ)? मणियों में शिरोमणि, सोचने मात्र से धन देने वाला चिन्तामणि (रत्न) है।

3. तब से वह उसके लिए अनेक स्थानों में खानों को खोदता है। फिर भी विभिन्न उपायों को करने से भी वह चिन्तामणि उसे प्राप्त नहीं होता है।

4. किसी ने (उसे) कहा– जहाज पर चढ़कर रत्नद्वीप में जाओ। वहाँ आशपुरी देवी है। (वह) तुम्हे इच्छित (फल) देगी।'

5. वहाँ रत्नद्वीप में इक्कीस दिनों में पहुँचा हुआ वह उस देवी की आराधना करता है। संतुष्ट हुई वह (देवी) इस प्रकार (उसे) कहती है–

6. 'हे भद्र ! तुम्हारे द्वारा आज मैं किस कार्य से पूजी गयी हूँ ?' वह कहता है– 'हे देवि ! यह प्रयत्न चिन्तामणि रत्न के लिए है।'

7. तब उस (संतुष्ट) देवी के द्वारा उस रत्न–व्यापारी को चिन्तामणि रत्न दे दिया गया। संतुष्ट हुआ वह (व्यापारी) अपने घर जाने के लिए जहाज पर चढ़ गया।

8. जहाज के एक स्थान पर बैठा हुआ (वह) व्यापारी जब समुद्र के बीच में आया तभी पूर्व दिशा में पूर्णिमा का चाँद निकल आया।

9. उस चाँद को देखकर वह व्यापारी अपने मन में सोचता है– 'चिन्तामणि रत्न का प्रकाश अधिक है अथवा चन्द्रमा का ?'

10. ऐसा सोचकर (वह) अपनी हथेली में चिन्तामणि रत्न को लेकर आँख से बार–बार रत्न और चन्द्रमा का निरीक्षण करता है।

11. और उसके दुर्भाग्य से इस प्रकार देखते हुए हथेली–प्रदेश से अत्यन्त छोटा और चमकदार वह रत्न समुद्र में गिर गया।

12. उस (व्यापारी) के द्वारा बार–बार खोजे जाने पर भी समुद्र के बीच में गिरा हुआ समस्त रत्नों का शिरोमणि (वह) चिन्तामणि क्या किसी प्रकार प्राप्त हो सकता है? (नहीं)।

13. उसी प्रकार बहुत प्रकार के सैकड़ों जन्मों में भ्रमण के द्वारा किसी–किसी प्रकार से प्राप्त मनुष्य–जन्म को जीव असावधानी (प्रमाद) से परवश होकर क्षणमात्र में खो देता हैं।

अभ्यास

1. शब्दार्थ :

वहण	=	जहाज
खवण	=	दिन
ठाण	=	स्थान
गंथ	=	ग्रन्थ
पोअ	=	जहाज
जलहि	=	समुद्र
अहयं	=	मैं
पएस	=	प्रदेश
अवर	=	श्रेष्ठ
णेग	=	अनेक
सुर	=	देवता
ताव	=	तभी
निअ	=	अपने
वणिओ	=	व्यापारी
करतल	=	हथेली
मयंक	=	चन्द्रमा
रयणायर	=	समुद्र
पमाय	=	असावधानी

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए –

(क) शब्दरूप	**मूलशब्द**	**विभक्ति**	**वचन**	**लिंग**
गुरूण	गुरु	षष्ठी	ब.व.	पु.
रयणेहिं		.....	.....	.....
ठाणेसु		.....	.....	.....

केण ....

देविं ....

धणाणि ....

(ख) संधिवाक्य विच्छेद संधिकार्य

किमवरेहि किं + अवरेहि अनुस्वार को म

चिंतिअत्थकरो चिंतिअ+अत्थकरोएक अ का लोप

कम्ममेव .....+..... .....

कम्माणुसारेण .....+..... .....

जेणप्पन्ति जेण + अप्पन्ति .....

रयणमिदु .....+..... .....

(ग) समासपद विग्रह समास नाम

कलाकुसलवणिओ कलासु+कुसलवणिओ सप्तमी तत्पुरुष

रयणपरिक्खागंथं रयणस्स+परिक्खागंथं षष्ठी तत्पुरुष

पुव्वदिसा पुव्वं + दिसा बहुब्रीही

(घ) क्रियारूप मूलक्रिया काल पुरुष वचन

अब्भसइ अब्भस वर्तमान अ.पु. ए.व.

खणेइ ....

वच्चसु वच्च आज्ञा म.पु. ए.व.

दाही दा भविष्य अ.पु. ए.व.**(ङ)**

कृदन्त अर्थ पहिचान मूलक्रिया प्रत्यय

आराहिआ पूजा की गई भू.कृ. आराह इ+अ

गहेऊण ग्रहण कर सं.कृ. गहि इ+(ए) ऊण

पडिअं गिर गया भू.कृ. पड इ+अ

संपत्तो पहुँचा भू.कृ. संपत्त अ

3. वस्तुनिष्ठ प्रश्न–

सही उत्तर का क्रमांक कोष्ठक में लिखिए –

1. व्यापारी ने प्राप्त करना चाहा था–

(क) जहाज (ख) धनसम्पत्ति

(ग) चिंतामणि रत्न (घ) ग्रन्थ ( )

2. वह जहाज पर चढ़कर गया –

(क) उज्जैनी (ख) श्रीलंका

(ग) समुद्र (घ) रत्नद्वीप ( )

4. लघुत्तरात्मक प्रश्न –

प्रश्नों के उत्तर एक वाक्य में लिखिए –

1. व्यापारी को देवी ने क्या कहा ?
2. समुद्र के बीच में व्यापारी क्या सोचने लगा ?
3. समुद्र में रत्न क्यों गिर गया ?

5. निबन्धात्मक प्रश्न एवं विशदीकरण –

(क) चिन्तामणिरत्न और मनुष्य जन्म की तुलना 5–7 वाक्यों में कीजिए।

(ख) पाठ का सार अपने शब्दों में लिखिए।

(ग) गाथा नं. 2 एवं 13 का अर्थ संदर्भ सहित समझाकर लिखो।

पाठ –3

कुसलो पुत्तो

पाठ–परिचय :

आख्यानकमणिकोश में से एक व्यापारी के तीन पुत्रों की कथा यहाँ प्रस्तुत की जा रही है। इस कथा में नयसार नामक व्यापारी एक दिन विचार करता है कि उसके तीन पुत्रों में से कुटुम्ब के मुखिया का पद सम्हालने वाला कौन पुत्र होगा? अतः उनकी बुद्धि और लगन की परीक्षा के लिए वह उन्हें एक–एक लाख रुपये व्यापार के लिए देता है। एक वर्ष के समय के भीतर जो पुत्र उन रुपयों का जैसा उपयोग करता है, उसको वैसा ही काम सौंपा जाता है।

यह कथा प्रतीक कथा है, जो यह बतलाती है कि कुल की इज्जत को सुरक्षित रखते हुए उसे और आगे बढ़ाने का प्रयत्न करने वाला पुत्र ही कुशल पुत्र होता है। जो ऐसा नहीं करता उसे कठोर परिश्रम वाला कार्य करना पड़ता है और दूसरे के अधीन रहना होता है।

नयरम्मि वसन्तपुरे नायरयजणाण गोरवट्ठाणं।
निवसइ सुइववहरणो नयसारो नाम पुरसेट्ठी।।1।।

अह अन्नया य को किर कुडुम्ब–पय–समुचिओ महं होही।
इय चिताए तिण्हं पुत्ताण परिक्खणनिमित्तं।।2।।

निय–सयण–बन्धु–पमुहं नायरयजणं निमंतिउं गेहे।
भोयाविऊण विहिणा तस्स समक्खं भणइ सेट्ठी।।3।।

एएसि मह सुयाणं तिण्हं पि हु को कुडुम्ब–पय–जोगो।
तं चेव विसेसेणं जाणसि जोगो त्ति तेणुत्तं।।4।।

इय एवं ता तुम्हं समक्खमेए अहं परिक्खेमि।
इय भणिउं वाहरिया तिन्नि वि ते पउर–पच्चक्खं।।5।।

पत्तेयं पत्तेयं लक्खं दाऊण दविणजायस्स।
ववहारत्थं देसेसु पेसिया तस्स समक्खमिमे।।6।।

तो तेसि पुत्ताणं चिंतियमेगेणमम्हमेस पिया।
पाएण दीहदरिसी धम्मपिओ सुइ–समायारो।।7।।

पाणच्चए वि अम्हाणमुवरि न कयावि चिंतइ विरूवं।
केणावि कारणेणं ता नूणं एत्थ भवियव्वं।।8।।

इय परिभाविय तहियं तह कहवि हु नियमईए ववहरियं।
जह विढविऊण कोडी वरिसन्ते पूरिया तेण।।9।।

बीएण चिंतियमिमं मम पिउणो विज्जए पभूय धणं।
ता किं किलेसजाले पाडेमि मुहाए अप्पाणं।।10।।

जइ सव्वं पि य विलसामि ता गओ कह मुहं पयंसिस्सं।
तम्हा मूलं रक्खिय सेसं भक्खेमि किं बहुणा।।11।।

तइएणमजोगत्ता विगप्पियं नियमणम्मि मह जणओ।
वुड्ढत्तणदोसेहिं संपइ कोडिकओ जम्हा।।12।।

तिट्ठा लज्जानासो भयबाहुल्लं विरूवभासित्तं।
पाएण मणुस्साणं दोसा जायन्ति वुड्ढत्ते।।13।।

अन्नह कहमम्हे पट्ठवेइ देसंतरम्मि सइ विहवे।
इय परिभाविय सव्वं वरिसंते भक्खियं दव्वं।।14।।

संपत्ता सव्वे वि हु नियसमए वन्नियस्सरूवा ते।
पुणरवि तहेव विहिऊण सेट्ठिणा भोयणाईयं।।15।।

सयणाईण समक्खं पढमो संठाविओ कुडुम्बपए।
बीओ भण्डारपए तइओ किसिमाइकज्जेसु।।16।।

,,,

हिन्दी

1. वसन्तपुर नगर में न्यायप्रिय लोगों में गौरव का स्थानरूप, अच्छे व्यवहार वाला नयसार नामक नगर–सेठ रहता था।

2–3. एक बार 'मेरे कुटुम्ब के पद के लिए उपयुक्त (पुत्र) कौन होगा।' इस चिन्ता से वह सेठ (अपने) तीनों पुत्रों की परीक्षा के लिए अपने स्वजन–बन्धुओं को और प्रमुख नागरिक जनों को (अपने) घर में निमन्त्रण देकर (तथा) विधिपूर्वक भोजन कराकर उनके समक्ष कहता है–

4. 'मेरे इन तीनों पुत्रों में कुटुम्ब–पद के लिए योग्य कौन है?' (उसके द्वारा) ऐसा कहने पर उन्होंने कहा– 'तुम ही विशेष रूप से जानते हो– कौन योग्य है?'

5. 'यदि ऐसा है तो आपके समक्ष ही मैं (इनकी) परीक्षा करता हूँ।' ऐसा कहकर नागरिकों के समक्ष (उसने) उन तीनों पुत्रों को बुलवाया।

6. प्रत्येक–प्रत्येक (पुत्र) को सोने की लाख मुद्राएँ देकर व्यापार (करने) के लिए इनको उनके ही समक्ष विदेशों में भेज दिया।

7–8. तब उन पुत्रों में से एक पुत्र के द्वारा विचार किया गया– 'हमारे यह पिता धर्मप्रिय, अच्छा आचरण करने वाले और प्रायः दूरदर्शी हैं। प्राण–त्याग होने पर भी हमारे ऊपर कभी भी विपरीत नहीं सोचते हैं। अतः निश्चित ही यह (व्यापार को भेजना) किसी भी कारण (उद्देश्य) से होना चाहिए।'

9. इस प्रकार सोचकर उस (पुत्र) के द्वारा अपनी बुद्धि से किसी प्रकार से वैसा व्यापार किया गया कि जिससे वर्ष के अन्त में वह (मूल पूँजी) बढ़ाकर एक करोड़ कर ली गयी।

10. दूसरे पुत्र के द्वारा यह सोचा गया कि 'मेरे पिता का पर्याप्त धन है। इसलिए कष्टों के जाल में (व्यापार में) अपने को व्यर्थ ही क्यों डालूँ?'

11. 'यदि सब कुछ ही मौज (खर्च) करलूँ तो वहाँ जाकर कैसे मुँह दिखाऊँगा? इसलिए मूलधन को सुरक्षित रखकर शेष (मुनाफा आदि) को खा डालता हूँ अधिक क्या सोचता?'

12. तीसरे अयोग्य पुत्र के द्वारा अपने मन में विचार किया गया कि– 'करोड़ों का स्वामी मेरा पिता बुढ़ापे के दोषों से युक्त हो गया है। जैसे कि–

13. बुढ़ापे में मनुष्यों के प्रायः तृष्णा, लज्जा का नाश, भय की बहुलता, विपरीत बोलना आदि दोष उत्पन्न हो जाते हैं।

14 अन्यथा वैभव (सम्पन्न) होते हुए (हमारे पिता) हम लोगों को विदेश में क्यों भेजते?' ऐसा सोचकर वर्ष के अन्त तक (उसने) सब धन खा डाला (खर्च कर दिया)।

15. अपने निश्चित समय पर सभी (स्वजन) और वे वणिक्–पुत्र एकत्र हुए। फिर से उसी प्रकार सेठ के द्वारा भोजन आदि को कराकर स्वजन आदि के सामने प्रथम पुत्र को कुटुम्ब–पद पर, दूसरे (पुत्र) को भण्डार–पद पर और तीसरे (पुत्र) को खेती आदि कार्यों में लगा दिया गया।

अभ्यास

1. शब्दार्थ :

पुरसेट्ठि	=	नगरसेठ
महं	=	मेरा
तिण्हं	=	तीन
परिक्खण	=	परीक्षा
सयण	=	स्वजन
नायरय	=	नागरिक
समक्खं	=	सामने
जोग	=	योग्य
पत्तेयं	=	प्रत्येक
दविणजाय	=	स्वर्णमुद्रा
ववहार	=	व्यापार
पिया	=	पिता
विरूवं	=	विपरीत
किलेस	=	कष्ट
मुहाए	=	व्यर्थ में
तिट्ठा	=	तृष्णा
वुड्ढत्तण	=	बुढ़ापा
तइअ	=	तीसरा

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए –

(क)शब्दरूप	मूलशब्द	विभक्ति	वचन	लिंग
विहिणा	.....	.....	.....	.....
मईए	.....	.....	.....	.....
दोसेहिं	.....	.....	.....	.....
विहवे	.....	.....	.....	.....

(ख) संधिवाक्य	विच्छेद	संधिकार्य
तेणुत्तं	तेण + उत्तं	अ + उ +उ
समक्खमिमे	समक्खं + इमे	.....
चिंतियमेगेणमम्हमेस	चिंतियं+एगेणं+अहं+एस	अनुस्वार को म
अम्हारगमुवरि	..... + ...	.....
भोयणईयं	भोयण + आईयं	.....

(ग) समासपद	विग्रह	समासनाम
गोरवट्ठाणं	गोरवस्स + ट्ठाणं	भठी तत्पुरुा
पुरसेट्ठी	..... + ...	.....
किलेसजाले	किलेसाण + जाले	.....
वुड्ढत्तणदोसेहिं	..... + ...	.....
भंडारपए	..... + ...	.....

(घ) क्रियारूप	मूलक्रिया	काल	पुरुष	वचन
परिक्खेमि	.....	.....	.....	.....
जायन्ति	.....	.....	.....	.....
भक्खेमि	.....	.....	.....	.....

(ङ) कृदन्त	अर्थ	पहिचान	मूलक्रिया	प्रत्यय
निमंतिउं	निमन्त्रण कर	सं. कृ.	निमंत	इ + उ
पेसिया	.....	.....	..... .	.....
पूरिया	पूरी कर ली	भू. कृ.	पूर	इ + य
रक्खिय	.....	.....	.....	.....
परिभाविय	विचार कर	सं. कृ.	परिभाव	इ + य

3. वस्तुनिष्ठ प्रश्न

सही उत्तर का क्रमांक कोष्ठक में लिखिए –

1. नयसार सेठ ने अपने पुत्रों को बुलाया था –

   (क) ईनाम देने के लिए (ख) परीक्षा करने के लिए

   (ग) विदेश भेजने के लिए (घ) सलाह करने के लिए ( )

2. पहले पुत्र ने मूल पूँजी को –

   (क) खा लिया (ख) सुरक्षित रखा

   (ग) बढ़ाकर 1 करोड़ कर लिया (घ) दान दे दिया

( )

4. लघुत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्नों के उत्तर एक–एक वाक्य में लिखिए –

1. नयसार अपने पुत्रों की परीक्षा किस लिए करना चाहता था?
2. तीसरे पुत्र ने अपने बूढ़े पिता के सम्बन्ध में क्या सोचा?
3. परिवार के प्रमुख का पद किस पुत्र को और क्यों मिला?

5. निबन्धात्मक प्रश्न एवं विशदीकरण

(क) इस पाठ का सार अपने शब्दों में लिखिए।

(ख) कुशलपुत्र के विचार अपने शब्दों में लिखिए।

(ग) गाथा नं. 10 एवं 11 का अर्थ संदर्भ सहित समझाकर लिखिए।

पाठ –4
साहसी अगडदत्तो

पाठ–परिचय :

उत्तराध्ययनसूत्र पर आचार्य नेमिचन्दसूरि की सुखबोधा टीका में से 12 कथाओं का सम्पादन एवं प्रकाशन मुनि श्री जिनविजय ने प्राकृतकथा–संग्रह नाम से किया है। उन्हीं कथाओं में से यह अगडदत्त की कथा का एक अंश यहाँ प्रस्तुत है।

अगडदत्त कथा एक प्रचलित लोककथा है। चौथी शताब्दी में लिखित 'वसुदेवहिण्डी' नामक प्राकृत ग्रन्थ में यह कथा मूलरूप में मिलती है। उसके बाद कई लेखकों ने इसे लिखा है। प्रस्तुत कथांश में अगडदत्त के उस साहस–कार्य का वर्णन है, जिसमें उसने एक मदोन्मत हाथी को अपने वश में किया है। उसके इस कार्य को देखकर नगर के राजा ने उसका सम्मान किया।

अन्नंमि दिणे सो राय–नन्दणो वाहियाए मग्गेणं।
तुरयारूढो वच्चइ ता नयरे कलयलो जाओ।।1।।

किं चलिउ व्व समुद्दो किं वा जलिओ हुयासणो घोरो।
किं पत्तं रिउ–सेन्नं तडि–दण्डो निवडिओ किं वा।।2।।

मिण्ठेण वि परिचत्तो मारेन्तो सोण्ड–गोयरं पत्ते।
सवडं मुहं चलन्तो कालो व्व अकारणे कुद्धो।।4।।

पट्ट–पय–बन्ध–रज्जू संचुण्णिय–भवण–हट्ट–देवउलो।
खण–मेत्तेण पयण्डो सो पत्तो कुमर–पुरओ त्ति।।5।।

तं तारिस–रूव–धरं कुमरं दट्ठूण नायर–जणेहिं।
गहिर–सरेणं भणिओ ओसर ओसर करि– पहाओ।।6।।

कुमरेण वि निय–तुरयं परिचइऊणं सुदक्ख–गइ–गमणं।
हक्कारिओ गइन्दो इन्द–गइन्दस्स सारिच्छो।।7।।

सुणिउं कुमार–सद्दं दन्ती पज्झरिय–मय–जल– पवाहो।
तुरिओ पहाविओ सो कुद्धो कालो व्व कुमरस्स।।8।।

कुमरेण य पाउरणं संवेल्लेऊण हिट्ठ–चित्तेणं।
धावन्त–वारणस्स सोण्डापुरओ उ पक्खित्तं।।9।।

कोवेण धमधमेन्तो दन्तच्छोभे य देइ सो तम्मि।
कुमरो वि पिट्ठभाए पहणइ दढ–मुट्ठि–पहरेणं।।10।।

ता ओधावइ धावइ चलइ खलइ परिणओ तहा होइ।
परिभमइ चक्क–भमणं दोसेणं धमधमेन्तो सो।।11।।

अइव महन्तं वेलं खेल्लावऊण तं गयं पवरं।
नियय–वसे काऊणं आरूढो ताव खन्धम्मि।।12।।

अह तं गइन्द–खेड्डं मणोहरं सयल–नयर–लोयस्स।
अन्तेउर–सरिसेणं पलोइयं नरवरिन्देणं।।13।।

दट्ठुं कुमरं गय–खन्ध–संठियं सुरवइं व सो राया।
पुच्छइ निय–भिच्च–यणं को एसो गुणनिही बालो।।14।।

तेएणं अधिमयरो सोमत्तणएण तह य निसिनाहो।
सव्व–कलागम–कुसलो वाई सूरो सुरूवो य।।15।।

को चित्तेइ मऊरं गइं च को कुणइ रायहंसाणं।
को कुवलयाण गन्धं विणयं च कुल–प्पसूयाणं।।16।।

साली भरेण तोएण जलहरा फलभरेण तरु–सिहरा।
विणएण य सप्पुरिसा नमन्ति नहु कस्स वि भएण।।17।।

,,,

हिन्दी

1. किसी एक दिन घोड़े पर चढ़ा हुआ वह राजपुत्र (अगडदत्त) बाहर के मार्ग से जा रहा था। तभी नगर में कोलाहल हो गया।

2. समुद्र की तरह क्या चला? अथवा क्या भयंकर अग्नि जल उठी ? क्या शत्रु की सेना आ गयी ? अथवा क्या बिजली का दण्ड (वज्रपात) गिर पड़ा है?

3. इसी बीच में अचानक आश्चर्य मन वाले कुमार के द्वारा सांकल सहित खम्भे को उखाड़कर आता हुआ पागल मद–हाथी देखा गया।

4. महावत से रहित, सूँड के सामने आने वालों को मारता हुआ, मुख के सामने चलते हुए काल की तरह, अकारण क्रोधी।

5. पैर में बंधी हुई रस्सी को तोड़ता हुआ, भवनों, बाजारों और मंदिरों को चूर्ण करता हुआ प्रचंड वह हाथी क्षणमात्र में कुमार के सामने पहुँच गया।

6. उस प्रकार के रूप को धारण करने वाले उस हाथी और कुमार को देखकर नागरिक लोगों के द्वारा गंभीर स्वर से कहा गया– 'हाथी के रास्ते से हट जाओ! हट जाओ!!'

7. सुन्दर गति से गमन करने वाले अपने घोड़े को छोड़कर कुमार के द्वारा इन्द्र के हाथी ऐरावत के समान वह हाथी ललकारा गया।

8. कुमार के शब्द को सुनकर मद–जल के प्रवाह को झराने वाला, क्रुद्ध यमराज की तरह वह हाथी कुमार की तरफ शीघ्र दौड़ा।

9. किन्तु प्रसन्नचित्त कुमार के द्वारा दुपट्टे को लपेटकर (उसे) दौड़ते हुए हाथी की सूँड के सामने फेंका गया।

10. क्रोध से धम–धमाता हुआ (वह हाथी) दाँत से (कुमार पर) प्रहार करता है और वह कुमार उस हाथी के पिछले भाग पर दृढ़ मुष्टि के प्रहार से चोट करता है।

11. तब (वह हाथी) पलटता है, दौड़ता है, लड़खड़ाता है तथा झुक जाता है। क्रोध से धाम–धमाता हुआ वह चक्र–भ्रमण की तरह घूमता है।

12. अति बहुत समय तक उस श्रेष्ठ हाथी को (कई चक्कर) खिलवाकर अपने वश में करके (वह कुमार) तभी उसके कन्धे पर चढ़ गया।

13. और नगर के सभी लोगों के लिए मनोहर उस गज–क्रीड़ा को अन्तःपुर (रनिवास) के साथ राजा ने देखा।

14.–15. वह राजा हाथी के कन्धे पर स्थित इन्द्र की तरह उस कुमार को देखकर अपने परिजनों को पूछता है– 'गुणों का खजाना, तेज से सूर्य एवं सौम्यता से चन्द्रमा की तरह, सभी कलाओं की प्राप्ति में कुशल, बुद्धिमान, वीर

एवं रूपवान यह बालक (राजकुमार) कौन है?' (उसे मेरे पास लाओ)।

96. मयूर को कौन चित्रित करता है और राजहंसों की गति को कौन बनाता है? कौन कमलों की सुगन्ध को तथा अच्छे कुल में उत्पन्न व्यक्ति की विनय को (कौन बनाता है)?

17. गुच्छों के भार से धान्य के पौधे, पानी से मेघ, फलों के भार से वृक्षों के शिखर और विनय से सज्जन पुरुष झुक (नम्र) जाते हैं, किन्तु किसी के भय से नहीं झुकते हैं।

अभ्यास

1. शब्दार्थ :

कलयल	=	कोलाहाल
हुयासण	=	अग्नि
घोर	=	भयंकर
रिउसेन्नं	=	शत्रु सेना
तडिदण्डो	=	वज्र
वारण	=	हाथी
मिण्ठ	=	महावत
सोण्ड	=	सूँड
काल	=	मृत्यु
सवड	=	सामने
हट्ट	=	बाजार
पयण्ड	=	प्रचण्ड
सर	=	स्वर
तुरये	=	घोड़ा
वेला	=	समय
सुरवइ	=	इन्द्र
मही	=	पृथ्वी
जलहर	=	बादल

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए –

(क)शब्दरूप	मूलशब्द	विभक्ति	वचन	लिंग
नयरे	.....	.....	.....	.....
सेन्नं	.....	.....	.....	.....
रज्जू	.....	.....	.....	.....
पहाओ	पह.	पंचमी	ए.व.	नपु.
गइन्दस्स	.....	.....	.....	.....
गयं	.....	.....	.....	.....
तोएण	.....	.....	.....	.....

(ख) संधिवाक्य	विच्छेद	संधिकार्य
तुरयारूढो	तुरय + आरूढो	.....
निवाडियालाण	..... + ...	.....
कलागम	..... + ...	.....

(ग) समासपद	विग्रह	समासनाम
रिउसेन्नं	रिउणो+सेन्नं	ष. तत्पुरुष
रायनन्दणो	..... + ...	.....
तरुसिहरा	..... + ...	.....
निसिनाहो	निसीह+ नाहो	.....
गुणनिही	..... + ...	.....

(घ) क्रियारूप	मूलक्रिया	काल	पुरुष	वचन
वच्चइ	.....	.....	.....	.....
ओसर	ओसर	आज्ञा	म.पु.	ए.व.
देइ	दा	व. का.	अ.पु.	ए.व.
परिभमइ	....	....	....	....
चिन्तेइ	....	.....	....	....

(ङ) कृदन्त	अर्थ	पहिचान	मूलक्रिया	प्रत्यय
मारेन्तो	मारता हुआ	व. कृ.	मार	ए + न्त
पलोइयं	देखा	भू.कृ.	अनियमित	.....
दट्ठु	देखकर	सं. कृ.	.....	.....
चिन्तियं	सोचा	भू.कृ.	चिन्त	इ+य

3. वस्तुनिष्ठ प्रश्न

सही उत्तर का क्रमांक कोष्ठक में लिखिए–

1. नगर में कोलाहल का कारण था –

   (क) राजकुमार का आगमन (ख) शत्रु की सेना

   (ग) पागल हाथी (घ) बिजली का गिरना ( )

2. हाथी पर चढ़ा हुआ वह कुमार था–

   (क) महावत की तरह (ख) राजा की तरह

   (ग) साधु की तरह (घ) इन्द्र की तरह ( )

4. लघुत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्नों के उत्तर एक–एक वाक्य में लिखिए –

1. पागल हाथी ने नगर को क्या नुकसान पहुँचाया?
2. राजा ने विजयी कुमार को देखकर क्या पूछा?
3. विनय से सज्जन पुरुष किसकी तरह झुक जाते हैं ?

5. निबन्धात्मक प्रश्न एवं विशदीकरण

(क) अगडदत्त और हाथी की लड़ाई का वर्णन अपने शब्दों में कीजिए।

(ख) गाथा नं. 14, 15, 16 एवं 17 का अर्थ संदर्भ सहित समझाकर लिखो।

पाठ –5

अहिंसओ बाहुबली

पाठ–परिचय :

प्राकृत का सर्वप्रथम चरित–काव्य पउमचरियं है। महाकवि विमलसूरि ने ईसा की लगभग 2–3 री शताब्दी में इसे लिखा था। इस ग्रन्थ में ऋषभदेव, भरत, बाहुबली, रामचन्द्र, हनुमान आदि महापुरुषों का जीवन–चरित वर्णित है। रामकथा पर प्राकृत भाषा में लिखा जाने वाला यह पहला ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ का सम्पादन डॉ. हर्मन जेकोबी एवं मुनि पुण्यविजय ने किया है।

भरत और बाहुबली ऋषभदेव के दो पुत्र हैं। दोनों अलग–अलग प्रान्तों के राजा थे, किन्तु भरत ने दिग्विजय करने के उद्देश्य से बाहुबली को भी अपने अधीन करना चाहा। इसके लिए भरत युद्ध करने के लिए बाहुबली के राज्य में पहुँचा। तब अपने राज्य की रक्षा करने के लिए बाहुबली ने भरत का सामना किया, किन्तु युद्ध में हजारों निरपराध व्यक्तियों की हत्या को देखकर बाहुबली ने भरत के सामने यह प्रस्ताव रखा कि हम दोनों आपस में शारीरिक युद्ध करके हारजीत का निर्णय कर लें। बाहुबली का यह प्रस्ताव इस देश में सबसे पहली अहिंसक–संधि थी, जिसने देश–रक्षा के साथ–साथ प्राणी–रक्षा भी की।

तक्खसिलाए महप्पा बाहुबली तस्स निच्च–पडिकूलो।
भरह–नरिन्दस्स सया न कुणइ आणा–पणामं सो।।1।।

अह रुट्ठो चक्कहरो तस्सुवरिं सयल–साहण–समग्गो।
नयरस्स तुरियचवलो विणिग्गओ सयल–बल–सहिओ।।2।।

पत्तो तक्खसिलपुरं जय–सद्दुघुट्ठ–कलयलारावो।
जुज्झस्स कारणत्थं सन्नद्धो तक्खणं भरहो।।3।।

बाहुबली वि महप्पा, भरहनरिन्दं समागयं सोउं।
भड–चडयरेण महया, तक्खसिलाओ विणिज्जाओ।।4।।

बल–दप्प–गव्वियाणं उभयबलाणं रसन्ततूराणं।
आभिट्टं पर–मरणं नच्चन्त–कबन्ध–पेच्छणयं।।5।।

भणिओ य बाहुबलिणा चक्कहरो किं वहेण लोयस्स।
दोण्हं पि होउ जुज्झं दिट्ठि–मुट्ठीहि रणमज्झे।।6।।

एवं च भणियमेत्ते दिट्ठीजुज्झं तओ समब्भडियं।
भग्गो य चक्खुपसरो पढमं च निज्जिओ भरहो।।7।।

पुणरवि भुयासु लग्गा एक्केक्कं ढिण–दप्प–माहप्पा।
चल–चलण–पीण–पेल्लण–करयल–परिहत्थविच्छोहा।।8।।

अद्ध–तडिजोत्तबन्ध–अवहत्थुव्वत्त–करण–निम्मविया।
जुज्झन्ति सवडहुत्ता अभग्गमाणा महापुरिसा।।9।।

एवं भरहनरिन्दो निहओ भुयविक्कमेण संगामे।
तो मुयइ चक्करयणं तस्स वहत्थं परम–रुट्ठो।।10।।

विणिवायण–असमत्थं गन्तूण सुदरिसणं पडिनियत्तं।
भुयबल–परक्कमस्स वि संवेगो तक्खणुप्पन्नो।।11।।

जंपइ अहो अकज्जं जं जाणन्ता वि विसयलोभिल्ला।
पुरिसा कसायवसगा करेन्ति एक्केक्कमविरोहं।।12।।

छारस्स कए नासन्ति चन्दणं मोत्तियं च दोरत्थे।
तह मणुय–भोग–मूढा नरा वि नासन्ति देविड्ढिं।।13।।

,,,

हिन्दी

1. तक्षशिला में हमेशा से राजा भरत का विरोधी महान् बाहुबली (था)। वह उसकी आज्ञा के अनुसार सदा (उसे) प्रणाम नहीं करता था।

2–3. इसके बाद उसके ऊपर क्रोधी चक्रधर भरत) सम्पूर्ण साधनों से युक्त (तथा) समस्त सेना के साथ शीघ्र गति वाला (वह) नगर से निकला। 'जय' शब्द के उद्घोष की कलकल की आवाज (से युक्त) वह भरत तक्षशिला पुर की पहुँचा। (और) उसी क्षण युद्ध के लिए तैयार हो गया।

4. महान् बाहुबली भी आये हुए भरत राजा को सुनकर सुभटों के बड़े समूहों के साथ तक्षशिला से निकला।

5. बल के घमण्ड से गर्वित (तथा) बजते हुए रणवाद्यों वाली दोनों सेनाओं का, नाचते हुए धड़ों से दर्शनीय भीषण मरण प्रारम्भ हुआ।

6. और (तब) बाहुबली के द्वारा भरत (को) कहा गया– 'लोगों के वध से क्या लाभ ? युद्धभूमि के बीच में (हम) दोनों का दृष्टि एवं मुष्टि द्वारा ही युद्ध हो जाय।'

7. तब इस प्रकार कहने मात्र पर (वे) दृष्टि–युद्ध लड़ने लगे। और चक्षु का प्रसार पहले भग्न्न करने वाला (पलक झपकाने वाला) भरत (बाहुबली के द्वारा) जीत लिया गया।

8–9. फिर अत्यन्त दर्प की धारण करने वाले, एक–दूसरे की भुजाओं में गुथे हुए, चंचल पैरों की तीव्र गति से और हथेलियों को चतुराई से लड़ाने वाले, आधी (चमकी हुई) बिजली की जीत के बन्धन की तरह मारने के लिए उठे हुए हाथों के विपरीत दाँव–पेंच को बनाने वाले, न टूटने (झुकने) वाले (वे दोनों) महापुरुष आमने–सामने होकर (मुष्टि) युद्ध करते हैं।

10. इस प्रकार (दूसरे) युद्ध में भी भुजाओं के बली (बाहुबली) द्वारा राजा भरत जीत लिये गये। तब अत्यन्त क्रोधी (भरत) उस (बाहुबली) के वध के लिए (उसके ऊपर) चक्र–रत्न को छोड़ता है।

11. जाकर (बाहुबली को) मारने में असमर्थ सुदर्शनचक्र (भरत के पास) वापस लौट गया। उसी क्षण बाहुबली को वैराग्य उत्पन्न हो गया।

12. (बाहुबली) कहता है–'आश्चर्य है, जो विषयों में लोभी (और) कषायों (दुष्प्रवृत्तियों) के वशीभूत पुरुष बिना विरोध (वैर) के भी एक–दूसरे का अकाज (अनिष्ट) करते हैं।

13. (जैसे व्यक्ति) राख के लिए चन्दन और डोरे के लिए मोती को नष्ट करते हैं, वैसे ही मानव–भोगों में मूढ मनुष्य (जीवन की) श्रेष्ठ उपलब्धियों को (तुच्छ वस्तुओं के लिए) नाश करते हैं।

अभ्यास

1. शब्दार्थ :

महप्पा	=	महान्
पडिकूल	=	विरोधी
आणा	=	आज्ञा
चक्कहर	=	चक्रवर्ती
साहण	=	सेना
तुरिय	=	शीघ्र
सयल	=	समस्त
उग्घुट्ठ	=	उद्घोष

जुज्झ	=	युद्ध
चडयर	=	समूह
बल	=	सेना
पेच्छणय	=	दर्शनीय
चक्खु	=	आँख
भुया	=	बाँह
परिहत्थ	=	निपुण
अवहत्थ	=	उठा हाथ
उव्वत्तकरण	=	दावपेंच
सवडहुत्ता	=	आमने–सामने

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए –

(क)शब्दरूप	**मूलशब्द**	**विभक्ति**	**वचन**	**लिंग**
तक्खसिलाए	.....	.....	.....	.....
नयरस्स	.....	.....	.....	.....
बलाणं	.....	.....	.....	.....
मुट्ठीहि	.....	.....	.....	.....
संगामे	.....	.....	.....	.....

(ख) संधिवाक्य	**विच्छेद**	**संधिकार्य**
तस्सुवरि	..... + ...	.....
सद्दु घुट्ठ	..... + ...	.....
तक्खणुप्पन्नो	..... + ...	.....
एक्केक्कमविरोहं	एक्क+एक्कं+अविरोहं.....	
दोरत्थे	दोर + अत्थे	.....

(ग) समासपद	**विग्रह**	**समासनाम**
बलदप्पगव्वियाण	बलदप्पेण+गव्वियाणं	तत्पुरुष
बलदप्प	बलस्स+दप्प	ष.त.
भुयविक्कमेण	भुयस्स+विक्कमेण	.....
विसयलोभिल्ला	विसयस्स+लोभिल्ला	.....

घ) क्रियारूप	**मूलक्रिया**	**काल**	**पुरुष**	**वचन**
होउ	**हो**	**इच्छा**	**अ.पु.**	ए.व.

जुज्झन्ति	.....	.....	.....	.....
मुयइ	.....	.....	.....	.....
करेन्ति	.....	.....	.....	.....

(ङ) कृदन्त अर्थ पहिचान मूलक्रिया प्रत्यय

विणिग्गओ	निकला भू.कृ.	अनियमित	.....
सोउं	सुनकर स. कृ.	सुअ	उं
नच्चन्त	नाचते हुए व.कृ.	नच्च	न्त
निज्जिओ	जीत लिया गया भू. कृ.	अनियमित	.....

3. वस्तुनिष्ठ प्रश्न

सही उत्तर का क्रमांक कोष्ठक में लिखिए –

1. बाहुबली रहता था–

   (क) उज्जैनी में (ख) अयोध्या में

   (ग) तक्षशिला में (घ) भरत के साथ ( )

2. भरत ने बाहुबली के वध के लिए छोड़ा–

   (क) बाण (ख) पागल हाथी

   (ग) चक्ररत्न (घ) भाला ( )

4. लघुत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्नों के उत्तर एक–एक वाक्य में लिखिए –

1. भरत और बाहुबली में युद्ध क्यों हुआ?
2. सैनिकों के वध को बचाने के लिए बाहुबली ने क्या प्रस्ताव रहा?
3. युद्ध के अन्त में बाहुबली ने क्या विचार व्यक्त किये?

5. निबन्धात्मक प्रश्न एवं विशदीकरण

(क) भरत और बाहुबली की कथा अपने शब्दों में लिखिए।

(ख) गाथा नं. 6, 12 एवं 13 का अर्थ संदर्भ सहित समझाकर लिखिए।

पाठ –6

जीवन मुल्लं

पाठ–परिचय :

प्राकृत मुक्तक साहित्य में 'वज्जालग्गं' ग्रन्थ का महत्त्वपूर्ण स्थान है। ग्रन्थ की गाथाएँ व्यक्तिगत रसास्वादन के साथ–साथ लोक–मंगल की भावना से भरी हुई हैं। पुरुषार्थ, ज्ञान, चरित्र, गुण–गरिमा, संगति, मित्रता, स्नेह आदि जीवन–मूल्यों का उद्‌घाटन इस ग्रन्थ की गाथाओं से होता है।

वज्जालग्गं के इसी महत्त्व को देखते हुए दर्शन के प्रोफेसर एवं प्राकृत अध्येता डॉ. कमलचन्द सोगाणी ने 'वज्जालग्ग में जीवन–मूल्य' भाग–1 नामक पुस्तक में इस ग्रन्थ की सौ गाथाओं का मूल्यांकन प्रस्तुत किया है। उसी से इस पाठ की गाथाएँ चयनित की गयी हैं। इन गाथाओं में कहा गया है कि धैर्यशाली पुरुष अपने कार्य को कभी अधूरा नहीं छोड़ते। ज्ञान से बढ़कर कोई बन्धु नहीं है। चरित्र की महिमा सबसे बढ़कर है। गुणी व्यक्ति हर प्रकार से आदर योग्य है, इत्यादि।

तं मित्तं कायव्वं जं किर वसणम्मि देसकालम्मि।
आलिहिय–भित्ति–बाउल्लयं व न परंमुहं ठाइ।।1।।

कीरइ समुद्दतरणं पविसिज्जइ हुयवहम्मि पज्जलिए।
आयामिज्जइ मरणं नत्थि दुलंघं सिणेहस्स।।2।।

एक्काइ नवरि नेहो पयासिओ तिहुयणम्मि जोण्हाए।
जा झिज्जइ झीणे ससहरम्मि वड्‌ढेइ वड्‌ढंते।।3।।

एमेव कह वि कस्स वि केण वि दिट्ठेण होइ परिओसो।
कमलायराण रइणा किं कज्जं जेण वियसन्ति।।4।।

सीलं वरं कुलाओ दालिद्दं भव्वयं च रोगाओ।
विज्जा रज्जाउ वरं खमा वरं सुट्‌ठु वि तवाओ।।5।।

सीलं वरं कुलाओ कुलेण किं होइ विगयसीलेण।
कमलाइ कद्दमे संभवन्ति न हु हुन्ति मलिणाइं।।6।।

छन्दं जो अणुवट्टइ मम्मं रक्खइ गुणे पयासेइ।
सो नवरि माणुसाणं देवाण वि वल्लहो होइ।।7।।

लवणसमो नत्थि रसो विन्नाण समो य बंधवो नत्थि।
धम्मसमो नत्थि निहि कोहसमो वेरिओ नत्थि।।8।।

सिग्घं आरुह कज्जं पारद्धं मा कहं पि सिढिलेसु।
पारद्ध सिढिलियाइं कज्जाइं पुणो न सिज्झन्ति।।9।।

नमिऊण जं विढप्पइ खलचलणं तिहुयणं पि किं तेण।
माणेण जं विढप्पइ तणं पि तं निव्वुइं कुणइ।।10।।

हंसो मसाणमज्झे काओ जइ वसइ पंकयवणम्मि।
तह वि हु हंसो हंसो काओ काओ च्चिय वराओ।।11।।

सव्वायरेण रक्खह तं पुरिसं जत्थ जयसिरी वसइ।
अत्थमिय चन्दबिंबे ताराहि न कीरए जोण्हा।।12।।

रायंगणम्मि परिसंठियस्स जह कुंजरस्स माहप्पं।
विझसिहरम्मि न तहा ठाणेसु गुणा विसट्टन्ति।।13।।

गुणहीणा जे पुरिसा कुलेण गव्वं वहन्ति ते मूढा।
वंसुप्पन्नो वि धणू गुण–रहिए नत्थि टंकारो।।14।।

बहुतरुवराण मज्झे चन्दणविडवो भुयंगदोसेण।
छिज्झइ निरावराहो साहु व्व असाहुसंगेण।।15।।

,,,

हिन्दी

1. वह मित्र बनाए जाने योग्य होता है, जो निश्चय ही (किसी भी) स्थान पर (तथा किसी भी) समय में विपत्ति पड़ने पर दीवाल पर चित्रित पुतले की तरह विमुख नहीं रहता है।

2. स्नेह के लिए (इस जगत् में कुछ भी) अलंघनीय (कठिन) नहीं है, समुद्र पार किया जाता है, प्रज्ज्वलित अग्नि में (भी) प्रवेश किया जाता है (तथा मरण) (भी) दिया जाता है (स्वीकार किया जाता है।)

3. तीनों लोकों में केवल अकेले चन्द्र–प्रकाश के द्वारा स्नेह व्यक्त किया जाता है (क्योंकि) जो (वह प्रकाश) क्षीण चन्द्रमा में क्षीण होता है (और) बढ़ते हुए (चन्द्रमा) में बढ़ता है।

4. किसी तरह किसी भी (स्नेही) के लिए किसी भी (स्नेही) के द्वारा देख लिये जाने से परितोष (आनन्द) होता है। इसी प्रकार सूर्य से कमल–समूहों का (स्नेह के अतिरिक्त और) क्या प्रयोजन, जिससे (वे) खिलते हैं ?

5. कुल से शील (चरित्र) श्रेष्ठतर है, तथा रोग से निर्धनता (अधिक) अच्छी है; राज्य से विद्या श्रेष्ठतर है, तथा अच्छे (श्रेष्ठ) तप से क्षमा श्रेष्ठतर है।

6. (उच्च) कुल से शील (चरित्र) उत्तम होता है, विनष्टशील के होने पर (उच्च) कुल के द्वारा क्या लाभ होता है? कमल कीचड़ में पैदा होते हैं, किन्तु मलिन नहीं होते हैं।

7. जो (योग्य व्यक्ति की) इच्छा का अनुसरण करता है, (उसके) मर्म (गुप्त बात) का रक्षण करता है, (उसके) गुणों को प्रकाशित करता है, वह न केवल मनुष्यों का, (अपितु) देवताओं का भी प्रिय होता है।

8. लवण के समान रस नहीं है, ज्ञान के समान बन्धु नहीं है, धर्म के समान निधि नहीं है और क्रोध के समान वैरी नहीं है।

9. कार्य तेजी से करों, प्रारम्भ किये गए कार्य को किसी तरह भी शिथिल मत करो (क्योंकि) प्रारम्भ किये गए (तथा) फिर शिथिल किये गए कार्य सिद्ध (पूरे) नहीं होते हैं।

10. खल–चरण में झुककर जो त्रिभुजन भी उपार्जित किया जाता है, उससे क्या लाभ ? सम्मान से जो तृण भी उपार्जित किया जाता है, वह साख उत्पन्न करता है।

11. यदि हंस मसाण (मरघट) के मध्य में रहता है (और) कौआ कमल–समूह में रहता है, तो भी निश्चित ही हंस, हंस है और बेचारा कौआ, कौआ ही (है)।

12. जहाँ जय–लक्ष्मी रहती है, उस पुरुष की पूर्ण आदर से रक्षा करो। (क्योंकि) चन्द्र–बिंब के अस्त होने पर तारों द्वारा प्रकाश नहीं किया जाता है।

13. जिस तरह राजा के आंगन में स्थित हाथी की महिमा (होती है, किन्तु) विन्ध्य पर्वत के शिखर पर (स्थित हाथी की महिमा) नहीं (होती है), उसी तरह (उचित) स्थानों पर गुण खिलते हैं।

14. जो पुरुष गुणहीन है, वे मूढ़ (ही) कुल के कारण गर्व धारण करते हैं। (ठीक ही है) बाँस से उत्पन्न धनुष भी रस्सी (गुण) से रहित होने पर टंकार वाला नहीं (होता है)।

15. बहुत बड़े वृक्षों के बीच में सर्प–दोष के कारण चन्दन की शाखा काट दी जाती है, जैसे अपराध रहित भद्र पुरुष दुष्ट–संग के कारण (कष्ट दिया जाता है) ।

अभ्यास

1. शब्दार्थ :

वसण	=	विपत्ति
बाउल्लय	=	पुतला
परंमुह	=	विमुख
हुयवह	=	अग्नि
भव्वय	=	अच्छा
कद्दम	=	कीचड़
छंद	=	इच्छा
लवण	=	नमक
निव्वुइ	=	सुख
मसाण	=	मसान
काओ	=	कौआ
वराओ	=	बेचारा
कुंजर	=	हाथी
माहप्पं	=	महिमा
धणु	=	धनुष
विडव	=	शाखा
साहु	=	भद्र व्यक्ति
असाहु	=	दुष्ट

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए –

(क) शब्दरूप	**मूलशब्द**	**विभक्ति**	**वचन**	**लिंग**
वसणम्मि	.....	.....	.....	.....
मरणं	.....	.....	.....	.....
रइणा	.....	.....	.....	.....

कुलाओ	....	....	....	....
कमलाइ	....	....	....	....
ताराहि	....	....	....	....

(ख) संधिवाक्य विच्छेद संधिकार्य

संधिवाक्य	विच्छेद	संधिकार्य
कमलायर	...... + ...	....
रायंगणम्मि	...... + ...	....
निरावराहो	...... + ...	....
वंसुप्पन्नो	...... + ...	....

(ग) समासपद विग्रह समासनाम

समासपद	विग्रह	समासनाम
समुद्दतरणं	..... + ...	....
खलचलणं	..... + ...	....
तिहुयणं	तिहु + यणं	....
पंकयवणम्मि	..... + ...	....
चंदणविडवो	..... + ...	....

(घ) क्रियारूप मूलक्रिया काल पुरुष वचन

क्रियारूप	मूलक्रिया	काल	पुरुष	वचन
ठाइ	......	......	......	......
बड्ढेइ	......	......	......	......
सिज्झन्ति	......	......	......	......
छिज्झइ	......	......	......	......
रक्खह	......	......	......	......

(ङ) कृदन्त अर्थ पहिचान मूलक्रिया प्रत्यय

कृदन्त	अर्थ	पहिचान	मूलक्रिया	प्रत्यय
कायव्वं	करना चाहिए	वि. कृ.	का (कर)	यव्व
आलिहिय	चित्रित	भू.कृ.	आलिह	इ+य
पयासिओ	व्यक्त किया है	भू.कृ.	पयास	इ+अ
नमिऊण	झुककर	सं. कृ.	नम	इ+उ

पाठ –7

3. वस्तुनिषठ प्रश्न

जीवण–ववहाहारो

सही उत्तर का क्रमांक कोष्ठक में लिखिए –

पाठ–परिपाठ –7

1. स्नेह व्यक्त किया जाता है–

(क) सज्जन के द्वारा (ख) चापलूस व्यक्ति के द्वारा

(ग) चन्द्रप्रकाश के द्वारा (घ) कमल द्वारा ( )

जीवण–ववहाहारो

2. अपराधरहित भद्रपुरुषों को कष्ट दिया जाता है –

(क) उनके गुणों के द्वारा (ख) दुष्टजनों की संगति के द्वारा

(ग) उनकी निर्धनता के द्वारा (घ) मूर्ख राजा के द्वारा

( )

4. लघुत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्नों के उत्तर एक–एक वाक्य में लिखिए –

1. कौन व्यक्ति मित्र बनाए जाने योग्य होता है?
2. किस व्यक्ति का हमेशा आदर करना चाहिए ?
3. गुण कहाँ पर खिलते हैं?

5. निबन्धात्मक प्रश्न एवं विशदीकरण

(क) इस पाठ की प्रमुख शिक्षाओं को अपने शब्दों में लिखो।

(ख) गाथा नं. 4, 7, 8 एवं 14 का अर्थ संदर्भ सहित समझाकर लिखो।

पाठ –7
जीवण–ववहाहारो

पाठ–परिचय :

प्राकृत साहित्य अर्धमागधी प्राकृत एवं शौरसेनी प्राकृत में भी उपलब्ध है। इन दोनों का संकलन–ग्रन्थ एक तो 'समणसुत्तं' है, जिसमें से कुछ गाथाएँ 'सिक्खानीई' नामक पाठ में पहले प्रस्तुत की गयी हैं। दूसरा संकलन–ग्रन्थ अर्हत्प्रवचन है, जिसका चयन दर्शन और आगम ग्रन्थों के प्रसिद्ध विद्वान स्व. पं. चैनसुखदास न्यायतीर्थ ने किया था।

ज्ञान का प्रकाश सर्वव्यापी है। विनय का फल सबका कल्याण है। हितकारी और संयत वचन मनुष्य को सुखी करते हैं। सज्जन व्यक्ति की संगति प्रतिष्ठा देती है और दुर्जन की संगति मूल स्वभाव को बदल देती है। गुण कहने से नहीं, अपने आप प्रगट होते हैं और आचरण से ही उनका विकास होता है। क्रोध और मान को त्यागने से जीवन को सार्थक किया जा सकता है, आदि जीवन–व्यवहारों का निर्देश प्रस्तुत पाठ में है।

णाणुज्जोवो जोवो णाणुज्जोवस्स णत्थि पडिघादो।
दीवेइ खेत्तमप्पं सूरो णाणं जगमसेसं।।1।।

थेवं थेवं धम्मं करेह जइ ता बहुं न सक्केह।
पेच्छह महानईओ बिन्दूहिं समुद्दभूयाओ।।2।।

विणएण विप्पहूणस्स हवदि सिक्खा णिरत्थिया सव्वा।
विणओ सिक्खाए फलं विणयफलं सव्वकल्लाणं।।3।।

जल–चंदण–ससि–मुत्त–चंदमणी तह णरस्स णिव्वाणं।
ण करंति कुणइ जह अत्थज्जुयं हिय–मधुर–मिद–वयणं।।4।।

कुसुममगंधमिव जहा देवयसेसत्ति कीरदे सीसे।
तह सुयणमज्झवासी वि दुज्जणो पूइओ होइ।।5।।

दुज्जणसंसग्गीए पजहदि णियगं गुणं खु सुजणो वि।
सीयलभावं उदयं जह पजहदि अग्गिजोएण।।6।।

वायाए अकहन्ता सुजणे चरिदेहि कहियगा होन्ति।
विकहिंतगा या सगुणे पुरिसा लोगम्मि उवरीव।।7।।

संतो हि गुणा अकहिंतस्स पुरिसस्स ण वि य णस्संति।
अकहिंतस्स वि जह गहवइणो जगविस्सुदो तेजो।।8।।

अप्पपसंसं परिहरह सदा मा होह जसविणासयरा।
अप्पाणं थोवन्तो तणलहुदो होदि हु जणम्मि।।9।।

वायाए जं कहणं गुणाण तं णासणं हवे तेसिं।
होदि हु चरिदेण गुणाण कहणमुब्भासणं तेसि।।10।।

किच्चा परस्स णिन्दं जो अप्पाणं ठवेदुमिच्छेज्ज।
सो इच्छदि आरोग्गं परम्मि कडुओसहे पीए।।11।।

सुठ्ठु वि पियो मुहुत्तेण होदि वेसो जणस्स कोधेण।
पधिदो वि जसो णस्सदि कुद्धस्स अकज्जकरणेण।।12।।

माणी विस्सो सव्वस्स होदि कलह–भय–वेर–दुक्खाणि।
पावदि माणी णियदं इह–परलोए य अवमाणं।।13।।

समणस्स जणस्स पिओ णरो अमाणी सदा हवदि लोए।
णाणं जसं च अत्थं लभदि सकज्जं च साहेदि।।14।।

,,,

हिन्दी

1. ज्ञान का प्रकाश (ही सच्चा) प्रकाश (है, क्योंकि) ज्ञान के प्रकाश की (कोई) रुकावट नहीं है। सूरज थोड़े क्षेत्र को प्रकाशित करता है, (किन्तु) ज्ञान पूरे संसार को।

2. यदि अधिक न कर सको तो थोड़ा–थोड़ा ही धर्म करो। बूँद–बूँद से समुद्र बन जाने वाली महानदियों को देखो

3. विनय से रहित व्यक्ति की सारी शिक्षा निरर्थक हो जाती है। विनय शिक्षा का फल है (और) विनय का फल सबका कल्याण है।

4. जल, चन्दन, चन्द्रमा, मुक्ताफल, चन्द्रमणि (आदि) मनुष्य को उस प्रकार सुखी नहीं करते हैं, जिस प्रकार अर्थयुक्त, हितकारी, मधुर और संयत वचन (सुखी करते है)।

5. जिस प्रकार गंधरहित पुष्प भी देवता का प्रसाद है, ऐसा मानकर सिर पर रख लिया जाता है उसी प्रकार सज्जन लोगों के बीच रहने वाला दुर्जन भी पूज्यनीय हो जाता है।

6. दुर्जन की संगति से सज्जन भी निश्चय ही अपने गुण को छोड़ देता है। जैसे जल अग्नि के संयोग से (अपने) शीतल–स्वभाव को छोड़ देता है।

7. सज्जन लोग (अपने गुणों को) वाणी से न कहते हुए कार्यों से प्रकट करने वाले होते हैं और अपने गुणों को न कहते हुए वे मनुष्य–लोक में ऊपर उठे हुए हैं।

8. नहीं कहने वाले भी मनुष्य के विद्यमान गुण नष्ट नहीं होते हैं। जैसे (अपने तेज का) बखान न करने वाले सूरज का तेज संसार में प्रसिद्ध है।

9. आत्म–प्रशंसा को हमेशा (के लिए) छोड़ दो, (अपने) यश के विनाश करने वाले मत बनो। क्योंकि अपनी प्रशंसा करता हुआ मनुष्य लोगों में तिनके के समान हल्का हो जाता है।

10. वचन से (अपने) गुणों को जो कहना है, वह उन गुणों का नाश करना होता है और आचरण से गुणों का प्रकट करना उनका विकास करना होता है।

11. जो (व्यति) दूसरे की निन्दाकर अपने की (गुणवानों में) स्थापित करने की इच्छा करता है, वह दूसरों के द्वारा कड़वी औषधि पी लेने पर (स्वयं) आरोग्य चाहता है।

12. क्रोध से मनुष्य का अत्यन्त प्यारा व्यक्ति भी मुहूर्त्त (क्षण) भर में शत्रु हो जाता है। क्रोधी व्यक्ति के अनुचित आचरण से अत्यन्त प्रसिद्ध उसका यश भी नष्ट हो जाता है।

13. घमण्डी व्यक्ति सबका वैरी हो जाता है। मानी व्यक्ति इस लोक और परलोक में कलह, भय, वैर, दुःख और अपमान को अवश्य ही प्राप्त करता है।

14. अभिमान से रहित मनुष्य संसार में स्वजन और जन–सामान्य (सभी) को सदा प्रिय होता है और ज्ञान, यश, धन (आदि) को प्राप्त करता है तथा अपने कार्य को सिद्ध कर लेता है।

अभ्यास

1. शब्दार्थ :

खेत्तं	=	क्षेत्र
जगं	=	संसार
असेसं	=	सम्पूर्ण

सिक्खा	=	शिक्षा
विणअ	=	विनय
सीस	=	सिर
वाया	=	वाणी
चरिद	=	आचरण
गहवई	=	सूर्य
पर	=	दूसरा
वेस	=	शत्रु
अकज्ज	=	अनुचित
करण	=	आचरण
णियदं	=	निश्चित
सयण	=	स्वजन
जस	=	यश
अत्थ	=	धन

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए –

(क) शब्दरूप	**मूलशब्द**	**विभक्ति**	**वचन**	**लिंग**
महानईओ	.....	.....	.....	.....
बिन्दूहिं	.....	.....	.....	.....
सिक्खाए	.....	.....	.....	.....
गुणं	.....	.....	.....	.....
गहवइणो	.....	.....	.....	.....
कोधेण	.....	.....	.....	.....

(ख) संधिवाक्य	**विच्छेद**	**संधिकार्य**
णाणुज्जोवो	..... + ...	.....
खेत्तमप्पं	..... + ...	.....
जगमसेसं	..... + ...	.....
कुसुममगंधमिव	..... + ...	.....
कहणमुब्भासणं	..... + ...	.....
ठवेदुमिच्छेज्ज	..... + ...	.....

(ग) समासपद विग्रह समासनाम

विणयफलं	..... + ...	.....
दुज्जणसंसग्गी	..... + ...	.....
सव्वकल्लाणं	..... + ...	.....

(घ) क्रियारूप मूलक्रिया काल पुरुष वचन

दीवेइ	.....	.....	.....	.....
पेच्छह	.....	.....	.....	.....
चक्खु	आँख	.....	.....	.....
हवदि	.....	.....	.....	.....
पजहदि	.....	.....	.....	.....
होदि	.....	.....	.....	.....
णस्सदि	....	.....	.....	
होह	.....	.....	.....	.....

(ङ) कृदन्त	**अर्थ**	**पहिचान**	**मूलक्रिया**	**प्रत्यय**
अकहंता	न कहते हुए	व. कृ.	कह	न्त
ठवेदु	स्थापित करने के लिए	हे. कृ.	ठव	ए+दु
पधिदो	प्रसिद्ध	भू. कृ.	पघ	इ+द

3. वस्तुनिष्ठ प्रश्न

सही उत्तर का क्रमांक कोष्ठक में लिखिए –

1. सारे जग को प्रकाशित करता है –

(क) दीपक (ख) ज्ञान

(ग) सूर्य (घ) चन्द्रमा ( )

2. सभी शिक्षा निरर्थक हो जाती है –

(क) क्रोधी शिष्य की (ख) रोगी शिष्य की

(ग) विनय से रहित शिष्य की (घ) गरीब शिष्य की

( )

4. लघुत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्नों के उत्तर एक–एक वाक्य में लिखिए –

1. दुर्जन की संगति से सज्जन के गुण कैसे बदल जाते हैं?

2. गुणों का वास्तविक प्रकाशन किससे होता है?

3. क्रोध करने से क्या नुकसान होता है?

5. निबन्धात्मक प्रश्न एवं विशदीकरण

(क) पाठ का सार अपने शब्दों में लिखिए।

(ख) गाथा नं. 3, 5, 8 एवं 12 का अर्थ संदर्भ सहित समझाकर लिखिए।

पाठ –8
रत्नत्रय अधिकार

पाठ–परिचय :

प्राकृत का प्राचीन साहित्य अर्धमागधी प्राकृत एवं शौरसेनी प्राकृत में भी उपलब्ध है। इन दोनों भाशाओं में रचित आगम–ग्रन्थों से प्रमुख गाथाओं का संकलन कर "कुन्दकुन्द का कुन्दन" नामक कृति का प्रकाशन किया गया। इस कृति में आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी के ग्रन्थों– समयसार, पंचास्तिकाय, प्रवचनसार, नियमसार, चारित्त पाहुड, मोक्षपाहुड, व दसभक्तियों से नीतिपरक एवं सुभाषित गाथाओं का संकलन किया गया है। आचार्य कुन्दकुन्द जैन परम्परा में ईसा की लगभग प्रथम शताब्दी के एक अप्रतिम आचार्य हैं। जिन्होंने जैन दर्शन के गुढ़तम रहस्यों के उद्घाटन में अपना जीवन समर्पित किया। उनकी लेखनी से प्रसूत समस्त जैन दर्शन नई दृष्टि को लिए हुए है। यही कारण है कि आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी शौरसेनी आगमिक परम्परा में वस्तु–तत्त्व–विवेचन, अनेकान्तवाद, रत्नत्रय, भेद–विज्ञान जैसे अन्यान्य दार्शनिक चिन्तन को आध्यात्मिकता का जामा पहनाकर प्रस्तुत करते हैं। उनके ग्रन्थों में प्रकीर्तित रत्नत्रय के स्वरूप को अस प्रकार विवेचित किया है।

अट्ठविहकम्ममुक्के अट्ठगुणड्ढे अणोवमे सिद्धे।
अट्ठमपुढवि णिविट्ठे णिट्ठियकज्जे य वंदिमो णिच्चं।।1।।

(सिद्धभक्ति–1)

मग्गो मग्गफलं ति य दुविहं जिणसासणे समक्खादं।
मग्गो मोक्खउवायो तस्स फलं होइ णिव्वाणं ।।2।। **(नियमसार–2)**

जीवादीसद्दहणं सम्मत्तं तेसिमधिगमो णाणं।
रागादीपरिहरणं चरणं एसो दु मोक्खपहो।।3।। **(समयसार–162)**

दंसणणाणचरित्ताणि सेविदव्वाणि साहुणा णिच्चं।
ताणि पुण जाण तिण्णिवि अप्पाणं चेव णिच्छयदो।।4।। **(समयसार–11)**

हिंसारहिए धम्मे अट्ठारहदोसवज्जिए देवे।
णिग्गंथे पव्वयणे सद्दहणं होइ सम्मत्तं।।5।। **(मोक्षपाहुड–10)**

छुहतण्हभीरुरोसो रागो मोहो चिंता जरा रुजामिच्चू।
सेदं खेद–मदो रइ–विम्हियणिद्दा जणुव्वेगो।।6।। (नियमसार–6)

सम्मत्तस्स णिमित्तं जिणसुतं तस्स जाणया पुरिसा।
अन्तरहेऊ भणिदा दंसणमोहस्स खयपहुदी।।7।। (नियमसार–53)

भूदत्थेणाभिगदा जीवाजीवा य पुण्णपावं च।
आसवसंवरणिज्जरबंधो मोक्खो य सम्मत्त।।8।। (समयसार–15)

जो चत्तारि वि पाए छिंददि ते कम्म मोहबाधकरे।
सो णिस्संको चेदा सम्मादिट्ठी मुणेदव्वो।।1।। (समयसार–244)

जो ण करेदि दु कंखं कम्मफलेसु तहय सव्वधम्मेसु।
सो णिक्कंखो चेदा सम्मादिट्ठी मुणेदव्वो।।10।। (समयसार–245)

जो ण करेदि दुगुंच्छं चेदा सव्वेसिमेव धम्माणं।
सो खलु णिव्विदिगिंछो सम्मादिट्ठी मुणेदव्वो।।11।। (समयसार–246)

जो हवदि असम्मूढो चेदा सव्वेसु कम्मभावेसु।
सो खलु अमूढदिट्ठी सम्मादिट्ठी मुणेदव्वो।।12।। (समयसार–247)

जो सिद्धभत्ति जुत्तो उवगूहणगो दु सव्वधम्माणं।
सो उवगूहणगारी सम्मादिट्ठी मुणेदव्वो।।13।। (समयसार–248)

उम्मग्गं गच्छंतं सिवमग्गे जो ठवेदि अप्पाणं।
सो ठिदिकरणेण जुदो सम्मादिट्ठी मुणेदव्वो।।14।। (समयसार–249)

जो कुणदि वच्छलत्तं तिण्हेसगूहण मोक्खमग्गम्मि।
सो वच्छलभावजुदो सम्मादिट्ठी मुणेदव्वो।।15।। (समयसार–250)

विज्जारहमारूढो मणोरहरएसु हणदि जो चेदा।
सो जिणणाणपहावी सम्मादिट्ठी मुणेदव्वो।।16।। (समयसार–251)

अरहंतभासियत्थं गणहरदेवेहिं गंथियं सम्मं।
सुत्तत्थमग्गणत्थं सवणा साहंति परमत्थं।।17।। (सुत्तपाहुड–1)

अरहंते सुहभत्ती सम्मत्तं दंसणेण सुविसुद्धं।
सीलं विसयविरागो णाणं पुण केरिसं भणियं।।18।। (सीलपाहुड–40)

जिणवयणमोसहमिणं विसयसुहविरेयणं अमिदभूयं।
जरमरणवाहिहरणं खयकरणं सव्वदुक्खाणं।।11।। (दंसणपाहुड–17)

चारित्तं खलु धम्मो धम्मो जो सो समो त्ति णिद्दिट्ठो।
मोहक्खोहविहीणो परिणामो अप्पणो हु समो।।20।। (पवयणसारो,1–7)

अट्ठे अजधागहणं करुणाभावो य मणुवतिरिएसु।
विसएसु य अप्पसंगो मोहस्संदाणि लिंगाणि।।21।। (पवयणसारो, 1–75)

जिणणाणदिट्ठिसुद्धं पढमं सम्मत्तचरणचारित्तं।
विदियं संजमचरणं जिणणाणसदेसियं तं पि।।22।। (चारित्तपाहुड–5)

एवं चिय णाऊण य सव्वे मिच्छत्तदोस संकाई।
परिहरि सम्मत्तमला जिणीाणिया तिविहजोएण।।23।।

णिस्संकिय–णिक्कंखिय–णिव्विदिगिंछा अमूढदिट्ठी।
उवगूहणठिदिकरणं वच्छल्ल–पहावणा य ते अटठ।।24।।

तं चेव गुणविसुद्धं जिणसम्मत्तं सुमुक्खठाणाय।
जं चरइ णाणजुत्तं पढमं सम्मत्तचरणचारित्तं।।25।। (चारित्तपाहुड–6,7,8)

दुविहं संजमचरणं सायारं तह हवे णिरायारं।
सायारं सग्गंथे परिग्गहा रहिय खलु णिरायासं।।26।। **(चारित्तपाहुड–20)**

दंसण वय सामाइय पोसह सच्चित्त रायभत्ते य।
बंभारंभ परिग्गह अणुमण उद्दिदट्ठ देसविरदो य।।27।। **(चारित्तपाहुड–21)**

पंचेवणुव्वयाइं गुणव्वयाइं हवंति तह तिण्णि।
सिक्खावय चत्तारि य संजमचरणं च सायारं।।28।। **(चारित्तपाहुड–22)**

पंचिंदियसंवरणं पंचवया पंचविंसकिरियासु।
दोण्हं अणण्णभूदं भावं समणा परूविंति।।29।। **(चारित्तपाहुड–28)**

हिन्दी

ज्ञानावरणादि आठ प्रकार के कर्मों से मुक्त, अनन्तज्ञानादि आठ गुणों से सम्पन्न, अष्टम पृथ्वी ईशत्प्राग्भार में स्थित और अपने कार्य को पूर्ण करके कृतकृत्य हुए सिद्धपरमेष्ठी की मैं नित्य वन्दना करता हूँ।

1. जिनशासन में मार्ग और मार्ग का फल ये दो प्रकार कहे गये हैं मोक्ष की प्राप्ति का उपाय मार्ग है और उसका फल निर्वाण है।
2. जीवादि पदार्थों का श्रद्धान करना सम्यग्दर्शन है। उनका यथार्थ ज्ञान होना सम्यग्ज्ञान है, रागद्वेषादि से यथार्थ निवृत्त होना सम्यक् चारित्र है। इस प्रकार भेद रूप (तीनों का समुदाय रूप) मोक्ष पथ (मार्ग) है।
3. साधु को सम्यग्दर्शन–ज्ञान–चारित्र सदा सेवन करने योग्य हैं तथा इन तीनों को ही शुद्धात्मा निश्चय से जानो।
4. हिंसा रहित धर्मअठारह दोष रहित देव, निर्ग्रन्थ श्रमण, प्रवचन (समीचीन शास्त्र) के श्रद्धान करने से व्यवहार सम्यग्दर्शन होता है।
5. भूख, प्यास, भय, द्वेष, राग, मोह, चिंता, वृद्धावस्था, रोग, मृत्यु, स्वेद/पसीना, खेद, मद, रति, विस्मय, निद्रा, जन्म और अरति–ये अठारह दोष हैं।
6. जिनसूत्र और उनके जानने वाले पुरुष सम्यक्त्व के निमित्त हैं। दर्शनमोहनीय का क्षय, उपशम आदि अन्तरंग हेतु कहे हैं।
7. भूतार्थ से जाने हुये जीव–अजीव, पुण्य–पाप तथा आस्रव, संवर, निर्जरा, बन्ध और मोक्ष ये नव सम्यक्त्व हैं।
8. जो आत्मा कर्मबन्ध, मोह तथा बाधा को उत्पन्न करने वाले उन चारों ही मिथ्यात्व, अविरति, कषाय और योग रूप पापों को काटता है वह निःशंक सम्यग्दृष्टि जानना चाहिए।

9. जो आत्मा कर्मों के फल की तथा समस्त धर्मों की कांक्षा नहीं करता वह निःकांक्षित सम्यग्दृष्टि जानना चाहिये।

10. जो आत्मा सभी धर्मों–स्वभावों के प्रति जुगुप्सा–ग्लानि नहीं करता है वह निश्चय से निर्विचिकत्सक सम्यग्दृष्टि जानना चाहिये।

11. जो आत्मा शुभ या अशुभ कार्मों के द्वारा उपजाये हुये शुभ अशुभ भावों में अमूढ़ एवं यथार्थ दृष्टि वाला होता है वह निश्चय से अमूढ़दृष्टि सम्यग्दृष्टि जानना चाहिये।

12. जो आत्मा सिद्धभक्ति से युक्त है और रागादि वैभाविक सभी धर्मों का उपगूहक–नाश करने वाला है वह उपगूहनकारी सम्यग्दृष्टि जानना चाहिये।

13. जो उन्मार्ग में जाते हुये अपनी आत्मा को शिवमार्ग में स्थापित करता है वह स्थितिकरण युक्त सम्यग्दृष्टि जानना चाहिये।

14. जो आत्मा मोक्षमार्ग में तीर सम्यग्दर्शन–ज्ञान–चारित्र इन तीन साधनों में वात्सल्यभाव से युक्त है उसे सम्यग्दृष्टि जानना चाहिये।

15. जो आत्मा विद्यारूपी रथ में आरूढ़ हुआ मन रूपी रथ के वेगों को नष्ट करता है वह जिनेन्द्र भगवान के ज्ञान की प्रभावना करने वाला सम्यग्दृष्टि जानना चाहिये।

16. अरहंत भगवान के द्वारा प्रतिपादित है, गणधर देवों के द्वारा सम्यक् प्रकार गुंफित है, आगम के अर्थ का अन्वेषण करना ही जिसका प्रयोजन है, उसे सूत्र कहते हैं। ऐसे सूत्र के द्वारा सम्यग्दृष्टि दिगम्बर साधु परमार्थ को साधते हैं।

17. अरहंत भगवान् में शुभ भक्ति का होना स्म्यक्त्व है। जो सम्यग्दर्शन से विशुद्ध होता है तथा विषयों से विरक्ति का होना शील है। अतएव ये दोनों ही ज्ञान हैं इसके अतिरिक्त ज्ञान किस प्रकार कहा गया है?

18. यह जिनवचन रूपी औषधि विषय सुख का विरेचन करने वाली है। अमृतरूप है, जरा और मरण की व्याधि को हरने वाली है तथा सब दुःखों का क्षय करने वाली है।

19. चारित्र ही धर्म है। जो धर्म है वह समता भाव रूप कहा गया है समता ही मोह और क्षोभ रहित ऐसा आत्मा का परिणाम है।

20. पदार्थ का अयथार्थ श्रद्धान और मनुष्यों और तिर्यंचों के प्रति करुणा का अभाव और विषयों में आसक्ति यह सब मोह के लिंग हैं।

21. प्रथम सम्यक्त्वाचरण चारित्र है जो जिनेन्द्र देव के ज्ञान और दर्शन से शुद्ध है दूसरा संयमाचरण वह भी जिनेन्द्र देव के सम्यग्ज्ञान के द्वारा कहा गया है।

अभ्यास

3. वस्तुनिष्ठ प्रश्न

सही उत्तर का क्रमांक कोष्ठक में लिखिए –

1. मोक्षमार्ग का फल है –

   (क) संसार का सुख (ख) ज्ञान का सुख

   (ग) निर्वाण का सुख (घ) बचपन का सुख ( )

2. श्रावक व्रत के भेद होते हैं –

   (क) तीन (ख) पाँच

   (ग) बारह (घ) पन्द्रह

   ( )

4. लघुत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्नों के उत्तर एक–एक वाक्य में लिखिए –

1. समयसार का अर्थ क्या है?
2. गुणव्रत किसके व कितने होते हैं?
3. ''चारित्तं खलु धम्मो'' को परिभाशित कीजिए।
4. सम्यक्त किसे कहते हैं?

5. निबन्धात्मक प्रश्न एवं विशदीकरण

(क) इस पाठ का सार अपने शब्दों में लिखिए।

(ख) गाथा नं. 2, 4, 10, 15 एवं 18 का अर्थ संदर्भ सहित समझाकर लिखिए।

(ग) रत्नत्रय के स्वरूप पर एक निबन्ध लिखिए।